अगस्त 2006
Rs. 13 /-
चन्दामामा
Vapu
६० वर्षों से ज्ञान-विज्ञान तथा मनोविनोद को प्रकीर्ण करनेवाली विशिष्ट पत्रिका

NOW AVAILABLE AT ALL LEADING BOOK SHOPS

Hiya! What has hit the animal world?

Listen hard and look keenly.

Do you hear the jingle of the jungle?

Each book priced Rs.35/- only

A set of five story books
with the whackiest and most interesting
collection of animal stories ever written —
for Rs.175/- only

FOR FURTHER ENQUIRIES CONTACT :
CHANDAMAMA INDIA LTD., 82, DEFENCE OFFICERS COLONY,
CHENNAI - 600 097.

एकजुट भारत

“हमारी शक्ति हमारी एकता में है; हम देखें कि हमें कोई विभाजित न करे। हम एक राष्ट्र के रूप में एक साथ मिलकर खड़े रहें। यह पहली बार नहीं है कि उन्होंने (आतंकवादी) हमारी शांति और समृद्धि की जड़ें काटने का प्रयास किया है। इन तत्वों ने नहीं समझा है कि कोई भी भारत को झुका नहीं सकता, कि हम भारतीय एकजुट होकर खड़े हो सकते हैं।”

डॉ. मनमोहन सिंह

प्रधानमंत्री, भारत

हम सब प्रधानमंत्री के पीछे एकजुट होकर खड़े हो जायें और संसार को बता दें कि उनके शब्दों ने हमारे संकल्प को केवल मजबूत बनाया है।

चन्दामामा उनके शोक सन्तप्त परिवारों के प्रति समवेदना व्यक्त करता है, जिन्होंने मुम्बई तथा श्रीनगर में आतंकवादियों के हमले में अपनी जानें गवां दीं और उनके साथ एकात्मता का विश्वास दिलाता है जिन्होंने घायल होने के बावजूद देश को दी गई चुनौती का सामना करने में अदम्य साहस दिखाया।

चन्दामामा

सम्पुट-५७ अगस्त २००६ सञ्चिका - ८

अंतरंग

विशेष आकर्षण

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of Chandmama India Ltd.
to
Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal,
Chennai - 600 097
E-mail :
subscription@chandamama.org

शुल्क

सभी देशों में एयर मेल द्वारा बारह अंक ९०० रुपये।
भारत में बुक पोस्ट द्वारा बारह अंक १५० रुपये।
अपनी रकम डिमांड ड्राफ्ट या मनी-ऑर्डर द्वारा 'चंदामामा इंडिया लिमिटेड' के नाम भेजें।

संस्थापक
बी. नागि रेड्डी और चक्रपाणि

स्वाधीनता को सुरक्षित रखने की आवश्यकता

वर्ष १९४७: स्वाधीन भारत का अभी-अभी जन्म हुआ था। उसी वर्ष एक सम्पादकीय लेख में चन्दामामा ने अपने उद्देश्य को स्पष्ट किया था : समान विचार द्वारा राष्ट्रीय एकता की उपलब्धि, बच्चों में राष्ट्रीय गौरव को प्रोन्नत करना और देश की हजारों वर्षों की प्राचीन सांस्कृतिक परम्परा के महत्व को समझने में उनकी मदद करना। संस्थापक- सम्पादक ने किशोर पाठकों को कठिनाई से अर्जित स्वाधीनता की सुरक्षा के प्रति अपने को बचनबद्ध करने का परामर्श दिया था।

उनसठ वर्ष के बाद चन्दामामा पुनः बर्द्धनशील पीढ़ी से देश को अपने व्यक्तिगत हितों और धार्मिक निष्ठाओं से ऊपर रखने का निवेदन करता है; और उन्हें स्मरण दिलाता है कि उन्हें इस महान देश के कर्तव्यनिष्ठ नागरिक के रूप में वर्द्धित होना है। हमलोगों को नगरों की भौतिक समृद्धि से प्रगति का मूल्यांकन नहीं करना चाहिये। हमारा आधारभूत मापदण्ड यह होना चाहिये कि क्या हमने आन्तरिक शान्ति और सामंजस्य उपलब्ध कर लिया है।

राष्ट्रीय आंकड़ों के अनुसार, देश की आबादी का लगभग ३५ प्रतिशत भाग उन बच्चों का है जो पन्द्रह वर्ष की आयु से नीचे हैं। दस से १५ प्रतिशत भाग में वे बच्चे आते हैं जो १५ से १९ वर्ष के हैं। इस युव-शक्ति को समाज में फैली बुराइयों को निर्मूल कर देना चाहिये । यदि यह वर्ग राष्ट्र निर्माण के कार्य में गौरव अनुभव करे, तब भारत विश्व का नेता बन सकता है। वे सचमुच उस स्वाधीनता में चार चाँद लगा सकते हैं जिसे हमारे संस्थापक पितामहों ने अपने जीवन की आहुति देकर अर्जित की थी।

चन्दामामा उन सब को नमन करता है।

सम्पादक : विश्वम

Visit us at : http://www.chandamama.org

पाठकों का पन्ना

गोवा से श्रद्धा उबयकर

पिछले दो वर्षों से मैं संस्कृत चन्दामामा का ग्राहक हूँ। पत्रिका सूचनात्मक है तथा सब तरह के पाठकों का मनोरंजन करती है- चाहे वे बच्चे हों या बड़े। यह पाठकों को संस्कृति और उत्तम मूल्यों का ज्ञान प्रदान करती है। यह संस्कृत में बातचीत करने के लिए प्रोत्साहित करती है। भिन्न-भिन्न राज्यों की लोक कथाएँ, शिक्षात्मक तथा मनोरंजक कहानियाँ, बेताल कथाएँ, फोटो शीर्षक तथा अन्य प्रतियोगिताएँ इस पत्रिका में देखी जा सकती हैं। पुराणों की कहानियाँ आकर्षक होती हैं। 'भारत दर्शनम' सूचनात्मक तथा बहुत उपयोगी स्तम्भ है। चित्रों को देख कर कहानियाँ पढ़ने में और रोचक लगती हैं। संस्कृत में इन कहानियों को पढ़ कर लोगों के आचरण और बिचार परिष्कृत हो जाते हैं। वे भगवान के निकट आ जाते हैं। इस तरह चन्दामामा बहुत उपयोगी पत्रिका है।

बिहार से मनोरंजन प्रसाद

मैं बचपन में चन्दामामा का नियमित पाठक था। कुछ दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियों के कारण इसे बन्द करना पड़ा। मैंने पुनः चन्दामामा पढ़ना आरम्भ किया है। मुझे यह देख कर आश्चर्य हुआ कि चन्दामामा ने अपने उन प्रख्यात दिनों की तरह अपनी गुणवत्ता को बैसे ही बनाये रखा है। कहानियाँ अब भी बैसे ही प्राचीन भारतीय परम्परा को उजागर करती हैं, साथ ही, सुन्दर और जीवन्त चित्रों, मुद्रण की गुणवत्ता तथा कुल मिलाकर इसकी प्रस्तुति से भी मैं उतना ही प्रभावित हूँ। सम्पादकों तथा प्रकाशकों को बधाई।

अलहाबाद से नलिनि दीक्षित

मैंने अपने पुत्र के लिए तीन वर्षों तक संस्कृत चन्दामामा लिया। अब उसे कॉलेज में संस्कृत नहीं पढ़ना पड़ता, इसलिए सभी ३६ अंकों की प्रतियाँ मैंने एक संस्कृत शिक्षक प्रशिक्षण बिद्यालय के पुस्तकालय को भेंट कर दी हैं जिससे इसमें रुचि रखनेवाले छात्रों को लाभ मिल सके।

एम. श्रव्य, आई.आई.टी, चेन्नई से

मैं चन्दामामा का उत्सुक पाठक हूँ। मुझे आप की पत्रिका बहुत पसन्द है। आशा है, अपनी यह आश्चर्यजनक पत्रिका आप भविष्य में, अनेकानेक वर्षों तक प्रकाशित करते रहेंगे।

रुचि राजा

लक्ष्मीपति नंदनवन के जमींदार के दीवान में प्रधान रसोइया था। लोगों का मानना था कि रुचिकर पदार्थों को पकाने में उसकी बराबरी का कोई है नहीं। कितने ही सालों तक उस दीवान में उसने प्रधान रसोइया का काम संभाला और बुढ़ापे में वह पत्नी सहित गाँव लौट कर वहीं जीवन यापन करने लगा।

वहाँ उसका जीवन प्रशांत था। परंतु जब कभी भी वह भोजन करने बैठता, तब पत्नी की बनायी रसोई में कोई न कोई खोट निकालता था कि इसमें नमक कम है, मिर्च ज़्यादा है, ठ ीक तरह से पका नहीं है आदि आदि। दस साल का उसका पोता सारस्वत दादा की इन टिप्पणियों को ध्यान से सुनता रहता था। कुछ समय बाद लक्ष्मीपति की मृत्यु हो गयी। अब उसके घर में रहते हैं, मात्र लक्ष्मीपति की पत्नी और उसका पोता सारस्वत। तरकारी में थोड़ा भी नमक कम पड़ जाए तो सारस्वत कहा करता था, ''दादी, यह सब्जी इतनी बेस्वाद है कि मुँह में रखना भी मुश्किल हो रही है।'' उसकी दादी यह समझकर हँस पड़ती थी कि यह तो बिल्कुल अपना दादा जैसा है। चूँकि उसके माता-पिता नहीं रहे, इसलिए वह हर दिन उसके लिए स्वादिष्ट पकवान बनाती थी। इस वजह से वह किसी और काम के लायक़ नहीं रहा। उसका काम सिर्फ खाने का था।

गाँववाले चुपके से उसे पेटू कहा करते थे। वे कहते थे कि खाने में उसकी बराबरी का कोई है ही नहीं और इतना सुस्त भी देखने को कहीं नहीं मिलेगा।

उसकी थोड़ी-बहुत जायदाद थी, इसलिए नंदनवन के एक पुरोहित की बेटी शारदा से उसकी शादी हो गई। शादी के दिन जब भोजन परोसा गया, तब उसने उसमें तरह-तरह की कमियाँ

रमेश दीक्षित

ढूँढ़ निकालीं। जब ससुर को मालूम हुआ कि दामाद खाने-पीने में काफी अभिरुचि रखता है तो उसने अच्छे से अच्छे पकवान बनवाये और खिलाया।

दो हफ्तों के बाद पत्नी को ले आने सारस्वत ससुराल गया। रात में सब भोजन करने बैठे।

''यह भी कोई बैंगन की सब्जी है? थोड़ा-सा अदरक और कच्ची मिर्च कूटकर डाले जाएँ तो उसका स्वाद ही कुछ और होता। इस खीर में हरा कपूर डाला जाता तो इसका मज़ा ही कुछ और होता। बाप रे, यह बड़ा इतना सख्त क्येंहै?'' यों उसने अपने पाक शास्त्र का ज्ञान दिखाया।

उसकी पत्नी शारदा को पति की यह पद्धति सही नहीं लगी। वह चुपचाप सुनती रही। उस रात को जब शारदा दूध ले आयी, सारस्वत ने थोड़ा-सा दूध पीते हुए कहा, ''इस दूध में थोड़ी सी इलायची का चूर्ण डाला जाता तो इसकी रुचि ही कुछ और होती।''

शारदा उसकी बातों पर नाराज़ हो उठी, पर नाराजी को काबू में रखते हुए उसने शांत स्वर में कहा, ''लगता है, आपको रुचियों की अच्छी परख है। क्या रसोई बनाना भी जानते हैं?''

''रसोई बनाना तो आता नहीं, पर रुचियाँ बखूबी जानता हूँ।'' सारस्वत ने सगर्व कहा।

''इसके अलावा और कौन-कौन-सी विद्याएँ आप जानते हैं?'' शारदा ने पूछा।

''तुम क्या यह भी नहीं जानती कि सभी विद्याएँ सीखी जाती हैं, भरपेट खाने के लिए ही। जब खाने-पीने की कमी नहीं है तो विद्याएँ सीखने की ज़रूरत ही क्या है?'' सारस्वत ने पूछा।

शारदा समझ गयी कि उसके पति के सोचने की पद्धति क्या है। माँ से बताकर वह रोई भी। पर माँ ने उसे यह कहकर समझाया कि पति को सही रास्ते पर ले आना तुम्हारा कर्तव्य है। तब वह शांत हुई और पति के साथ ससुराल जाने को तैयार हुई।

शारदा को यह मालूम हो चुका था कि उसके पति को केवल खाने-पीने में ही अभिरुचि है, न कि किसी काम में। उसने सारस्वत की दादी से एक दिन अपना दुखड़ा कह डाला।

''हाँ, बेटी शारदा, मैं कर भी क्या सकती हूँ? उसके बचपन में ही माँ-बाप गुज़र गये। जब तक उसके मामा गाँव में थे, वे उसे पढ़ाया-

लिखाया करते थे। व्यापार करने वह विदेश चला गया। उसके बाद यह बड़ा ही निकम्मा बन गया। कोई भी काम करने के लिए आगे ही नहीं आता।'' दादी ने अपनी असहायता जताते हुए कहा।

एक दिन भोजन परोसते हुए शारदा ने अपने पति से कहा, ''बैठकर खाते ही रहोगे तो पहाड़ भी पिघल जायेंगे। यों खर्च करते रहोगे तो जो है, वह भी हाथ से निकल जायेगा। कोई काम करो। आपका समय भी निकल जायेगा।''

सारस्वत ने खाने के बाद कहा, ''मैं कोई भी काम नहीं जानता। कौन मुझे नौकरी देगा? कोई नौकरी दे तो मैं करने को तैयार हूँ।''

शारदा इस बात पर खुश हुई कि पति कम से कम कोई काम करने को तैयार तो है।

हर साल की तरह उस साल भी शारदा के जन्मस्थल में श्रीराम नवमी महोत्सव होनेवाले थे। शारदा के पिता ने उसे और दामाद को आने का निमंत्रण भेजा। उत्सव नंदिवर के ज़मींदार सत्यनारायण की अध्यक्षता में होनेवाले थे।

इस उत्सव के अवसर पर आये सबको स्वादिष्ट भोजन भी खिलाया जाता था। सारस्वत यथावत् उन पकवानों में भी दोष निकालने लगा, ''इस पूरन पूरी में मिठास कम है। इस खट्टे अन्न में हींग और डाला जाता तो जी भर जाता। लड्डुओं में काजू डालना भूल ही गये।''

सारस्वत की ये टिप्पणियाँ ज़मींदार के कानों तक पहुँचीं। वे नाराज़ हो उठे और कहने लगे, ''नंदिवर के ज़मींदार अपने आतिथ्य के लिए

विख्यात हैं। आज तक किसी ने दोष निकालने की जुर्रत नहीं की। किसने यह साहस किया?''

''क्षमा कीजिये, जमींदार साहब। जिसके बारे में आपने पूछा, वह मेरा दामाद सारस्वत है। रसोई में वह नल महाराज की बराबरी का है। किसी पकवान में क्या मिलाना है, कितना मिलाना है, जितना वह जानता है, उतना और कोई नहीं जानता। उसकी विद्या को समझनेवाला कोई नहीं रहा, इसीलिए उसकी यह दशा है। मौक़ा मिले तो वह अपना कौशल दिखाने को सन्नद्ध है।'' शारदा के पिता ने डरते हुए कहा।

''सारस्वत? कहीं यह लक्ष्मीपति सारस्वत का वारिस तो नहीं है?'' ज़मींदार ने पूछा। ''हाँ, हाँ, यह उसी लक्ष्मीपति सारस्वत का पोता है।'' शारदा के पिता ने कहा।

''तब तो बहुत अच्छा हुआ। हम उसे फौरन अपने दीवान के प्रधान रसोइये के पद पर नियुक्त करते हैं। उसके पाकशास्त्र की प्रवीणता की परीक्षा लेंगे।'' ज़मींदार ने कहा।

यह जानकर सारस्वत भय के मारे कांप उठा। ''तुम्हारे पिता यह क्या कर बैठे! मैं केवल खोट निकालना ही जानता हूँ। रसोई पकाना मैं जानता ही नहीं। आगे से मैं कभी खोट निकालूँगा ही नहीं। आज रात ही को गाँव चले जायेंगे।'' सारस्वत ने पत्नी से कहा।

''आप डरिये मत। आप प्रधान रसोइया हैं। आपको सिर्फ बताना है, करना कुछ नहीं। अनुभवी रसोइये कितने ही आपके अधीन होंगे। कौन-सी चीज़ें कितनी डालनी हैं, कितनी मात्रा में डालनी हैं, यही आपको बताना होगा। जरूरत पड़ी तो मैं रसोई से संबंधित बातें समझाऊँगी।'' शारदा ने उसे धैर्य देते हुए कहा।

सारस्वत दूसरे ही दिन दीवान गया। पत्नी के बताये निर्देशों का पालन किया। कुछ ही दिनों में वह ज़मींदार का प्रीति पात्र बना और अच्छा रसोइया कहलाया। ज़मींदार ने उसे ''रुचि राजा'' की उपाधि से उसका सम्मान किया।

पति में जो परिवर्तन हुआ और उसे जो आदर मिला, उसपर शारदा बेहद खुश हुई। उसके माता-पिता और उसकी दादी भी बहुत खुश हुए।

समयोचित बोध

विक्रमसेन कश्मीर देश का शासक था। वह दरबार में एक दिन पंडितों के साथ बैठकर चर्चाओं में मग्न था। उस समय दूर देश से एक पंडित वहाँ आया। उसने राजा की अनुमति लेकर स्वरचित संस्कृत का एक श्लोक सुनाया। उस श्लोक में समयोचित बोध को प्रमुखता दी गयी थी।

''जब, जो काम करना है, उसे जानकर किया जाए तो वह काम फलदायक होता है। ऐसा न करके, व्यर्थ का काम करने से कोई फल नहीं होता।'' यह उस श्लोक का भाव था। राजा को वह श्लोक बहुत ही अच्छा व सही लगा। पंडित का आदर-सत्कार किया और उसे मूल्यवान भेंटें भी दीं। इस के बाद उसने सभा को संबोधित करते हुए एक प्रश्न पूछा कि यह कैसे जान सकते हैं, ''फलाना काम फलाने समय पर करना चाहिये?''

सभा में उपस्थित ज्योतिषी ने कहा, ''ग्रहों की गति के अनुसार यह बताया जा सकता है।''

एक और पंडित ने कहा, ''अनुभवी पंडितों से पूछने पर इसकी जानकारी पायी जा सकती है।'' सभा में उपस्थित पंडितों ने अपने-अपने अभिप्राय व्यक्त किये।

पंडितों को बताया गया एक भी उत्तर बिक्रमसेन को संतुष्ट नहीं कर सका। उसने पंडितों से कहा, ''ठीक है, फिर कभी इसको लेकर चर्चा करेंगे।'' यों सभा उस दिन के लिए समाप्त हो गयी।

कुछ समय बीत गया। बिक्रमसेन एक दिन मंत्री को साथ लेकर एक जंगल में गया। वहाँ उन्होंने एक सुंदर आश्रम देखा। उन्होंने देखा कि आश्रम के समीप ही एक साधु भूमि को खोद रहे हैं। राजा ने पास जाकर साधु को नमस्कार किया।

''महोदय, आप तपस्वी और ज्ञानी हैं। क्या मेरे संदेह को दूर करने का कष्ट उठायेंगे?'' राजा ने पूछा।

भूषण

साधु ने सिर उठाया और एक क्षण तक राजा को देखते रहे। फिर मुस्कुराते हुए अपने काम पर लग गये।

तब राजा ने विनयपूर्वक कहा, ''कहते हैं कि समयोचित बोध होना चाहिये। उस समय को भला कोई कैसे जाने?''

साधु ने फिर से एक और बार राजा को देखा और मुस्कुरा दिया। विक्रमसेन को लगा कि साधु शायद मौनव्रत का पालन कर रहे हैं, इसलिए बिना कुछ कहे वह राजभवन लौट गया।

दूसरे दिन जोर से बारिश हुई। राजा आश्रम जाना चाहता था, पर जा नहीं सका। तीसरे दिन बारिश रुक गयी और वातावरण बड़ा ही प्रशांत व शीतल हो गया। इस बार राजा अकेले ही आश्रम गया। उस समय साधु खोदी जमीन को समतल बना रहे थे और पौधे रोप रहे थे।

विक्रमसेन ने साधु को प्रणाम किया और पूछा, ''स्वामी, कृपया, इस बार ही सही, मेरे प्रश्न का उत्तर दीजिए। मैं जब पिछली बार आया था, तब मैंने आपसे पूछा था कि यह कैसे जान सकते हैं कि कौन-सा कर्म कब करें।''

साधु यथावत् अपने काम में लगे हुए थे। फिर सिर उठाकर उन्होंने राजा को देखते हुए कहा, ''महाराज, आपके प्रश्न का उत्तर मैंने परसों ही दे दिया, पर आप समझे नहीं।''

''मैं समझा नहीं स्वामी, कृपया साफ़-साफ़ कहिये,'' विक्रमसेन ने दबे स्वर में कहा।

''वह ब्योरा यह है।'' कहते हुए साधु अपने काम में लग गये।

साधु की बातों से, व्यवहार से विक्रमसेन का संदेह अब दूर हो गया। यह सोचते हुए बैठे रहना नहीं चाहिये कि समय आया है या नहीं। जो काम करना है, उसे शुरू कर देना चाहिये। जिस प्रकार से साधु से रोपे गये पौधों को वर्षा ने सहयोग दिया, उसी प्रकार से जो काम हम करते हैं, उसे समय भी सहयोग देता है और यही सच है।

साधु को प्रणाम करके विक्रमसेन सन्तुष्ट होकर लौट गया।

भयंकर घाटी

12

(क्षत्रिय युवकों की तरह वेश बदलने का निश्चय करके, केशव और जयमल्ल ने ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक की गुफ़ा में से सोना चुरा लिया। उसी समय ब्राह्मदण्डी चिल्लाता अपने कमरे में से बाहर भागा। उसे पहरेवाले ने पकड़ लिया। उसने फिर साथ के पहरेदारों को बुलाया। बाद में...)

सीने पर भाला तना देख और सिपाही का चिल्लाना सुन, ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक की नीन्द की खुमारी जाती रही। इतने में वहाँ दो-तीन सिपाही और भागे-भागे आये और उसको घेर कर खड़े हो गये।

"भागने की सोच रहा था यह पाखण्डी! यों देखते क्या हो, भोंको ये भाले", कहते हुए एक सिपाही ने भाला उठाया। ब्राह्मदण्डी की जान जाते-जाते बची। कुछ देर तक उसके मुख से बात तक न निकली। कुछ देर बाद बड़बड़ाते, काँपते-काँपते उसने कहा, "वीर सैनिको, महाशयो, मुझे मत मारो। मैं भागने की कोशिश नहीं कर रहा हूँ।"

"तुमने भागने की कोशिश नहीं की?तो यह सब क्या है? तो तुम कहते हो कि मैं झूठा हूँ?" कहते हुए पहले सैनिक ने भाला उलटा करके उसे ज़ोर से मारा।

भाले की चोट खाकर ब्राह्मदण्डी नीचे गिर गया। छटपटाता बोला, "वीर पुँगव, मुझे न मारो। मैं जब सो रहा था, तो मुझे गन्दा सपना आया

और मैं उस सपने में बाहर भागा-भागा आ गया। गलती मेरी ही है। आपकी नहीं है।'' ब्राह्मदण्डी रोया-चिल्लाया।

परन्तु सैनिकों ने उसके हाथ-पैर बाँधकर इस तरह उठाया, जैसे कोई बहंगी उठा रहे हों, और उसे एक कमरे में एक पलंग पर डाल दिया। पलंग पर वह इतने जोर से गिरा कि वह नीचे जा लुढ़का, फिर अपना शरीर झाड़ते हुए उसने कहा, ''वीरो, शूरो, मुझे न सताओ। मेरे धोखेबाज शिष्य और उसका साथी जब मेरी पसीने की कमाई चुराकर भाग रहे थे, तो मेरी अक्ल जाती रही और मैंने ऐसा किया। सच मानो।''

''अब भी तुम्हारा दिमाग बिगड़ा हुआ है।'' ब्राह्मदण्डी की ओर सन्देह की दृष्टि से घूरते हुए एक सैनिक ने कहा।

''अभी तो तुम कह रहे थे कि कोई गन्दा सपना देखकर भागे थे और अब कह रहे हो कि तुम्हारे धोखेबाज शिष्य और उसके साथी को पसीने की कमाई चुराता देख तुम्हारा दिमाग बिगड़ गया है। कौन-सी बात सच है?'' एक और ने पूछा।

''यह फिर से पहाड़ों पर भाग जाने के लिए कोई चाल चल रहा है। यदि इसको रास्ते पर लाना है, तो राजगुरु के पास खबर भेजना अच्छा है।'' एक सिपाही ने कहा।

राजगुरु का नाम सुनते ही ब्राह्मदण्डी ने काँपते हुए कहा, ''निपुण योद्धाओ, मुझ पर दया करो, इस आधी रात के समय आपने राजगुरु को उठाया, तो न मालूम वे मेरा क्या करें?''

सैनिकों ने आपस में कानों-कान कुछ कहा, मान्त्रिक के कमरे के दरवाज़े बन्द करके, वहाँ दो को पहरे पर छोड़ तीसरा राजगुरु के पास भागा।

राजगुरु ने सैनिक की बात सुनकर कहा, ''अच्छा किया। सवेरा होते ही उसे राजा के पास लाओ। तुम अपने नायक से कहो कि मैंने कहा है कि जाकर देखेकि पहाड़ों पर, ब्राह्मदण्डी की गुफ़ा के पास क्या हुआ है।''

सूर्योदय होने से पहले चार सैनिक ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक की गुफ़ा के पास गये। गुफा के सामने हाथ-पैर बँधे अपने दो साथियों को देखा। उन्होंने बताया कि रात क्या गुजरा था।

गुफ़ा से जब सैनिक राजधानी वापस आये, तो राजा और राजगुरु के सामने ब्राह्मदण्डी हाथ

बाँधे खड़ा था। सैनिकों ने आकर पूरा वृत्तान्त सुनाया।

सब ध्यान से सुनने के बाद राजगुरु ने कहा, ''सैनिकों को हाथ-पैर बाँधकर डालनेवाले डाकू न थे, यह केशव और जयमल्ल की ही करतूत है परन्तु वह तीसरा आदमी कौन था, वह नहीं मालूम हो रहा है।''

''इसमें सन्देह की क्या बात है, राजगुरु श्रेष्ठ, वह अवश्य केशव का वृद्ध पिता है। मैंने अपने गन्दे सपने के बारे में कहा था न? उसमें यह बूढ़ा नहीं दिखाई पड़ा था। कुछ भी हो, मेरा खजाना लुट गया है।'' कहते-कहते ब्राह्मदण्डी रो-सा पड़ा।

राजगुरु ने ब्राह्मदण्डी के प्रति दया दिखाते हुए कहा, ''शोक न करो ब्राह्मदण्डी, भयंकर घाटी में खजाना मिलेगा।''

''उसमें तुम्हारा भी हिस्सा होगा। अब यह साफ़ हो गया है कि जो केशव हमें चाहिए था वह अभी राज्य की सीमाओं से बाहर नहीं गया है। उसे पकड़ने का प्रयत्न करें, चलो। पर यह भी स्पष्ट हो गया है कि वे भी भयंकर घाटी की ही ओर जा रहे हैं। रास्ते के खर्च के लिए उन्होंने यह चोरी की होगी।'' राजगुरु ने सोचते-सोचते धीमे-धीमे कहा।

ब्राह्मदण्डी ने गुस्से में फुंकारते हुए कहा, ''महाराज, राजगुरु शेखर, अब मुझे जाने दीजिये। आपकी योजना के अनुसार मैं भयंकर घाटी में पहुँचकर उन दुष्ट जयमल्ल और केशव को कालभैरव को बलि देकर, वहाँ मिलनेवाली धन-राशि ले आऊँगा। और राजा के खजाने में जमा कर दूँगा। आप मेरी राज भक्ति पर सन्देह न कीजिये। मैं राज्य की सेवा के लिए अपना शेष जीवन समर्पित करता हूँ। काल भैरव की जय।''

राजगुरु ने ब्राह्मदण्डी को चुप रहने का संकेत किया और वहाँ खड़े सैनिकों को जाने के लिए कहा। फिर उसने राजा से कहा, ''महाराज, मैंने ब्राह्मदण्डी, जितवर्मा और शक्तिवर्मा की यात्रा के लिए आज सायंकाल एक मुहूर्त निश्चित किया है। ताकि किसी को कोई सन्देह न हो, हमारे दूतों ने पहले ही आवश्यक अफवाहें सब जगह उड़ा दी होंगी।'' फिर उन्होंने राजा के कान में धीमे से अफवाह के बारे में कहा।

राजगुरु ने जैसा कहा था, सूर्योदय तक नगर

में एक अफवाह फैलनी शुरू हो गई थी। वह यह कि राजगुरु के पैरों पर कोई फोड़ा निकल आया है । उसकी चिकित्सा नहीं की जा सकती। इसलिए विंध्याचल में मिलनेवाली एक औषधि लाने के लिए ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक जा रहा है-ऐसा लोग कह रहे हैं।

यदि लोगों को यह मालूम हो जाता कि ब्राह्मदण्डी भयंकर घाटी की ओर विपुल धन राशि के लिए जा रहा है, तो जिन देशों में से उसको जाना था, उनके राजा, उसकी राह में अड़चनें पैदा कर सकते थे। इसीलिए राजगुरु ने यह अफवाह उड़ाई थी। जब कोई राजगुरु की प्राण रक्षा के लिए औषधि लाने जा रहा हो, तो उसे कोई न रोकेगा। बल्कि लोग उसकी मदद भी करेंगे।

कुछ भी हो, राजगुरु की चाल चल गई। वह ब्राह्मदण्डी, जो दुष्ट मान्त्रिक के नाम से बदनाम था, अब महावैद्य समझा जाने लगा। "अगर वह महान वैद्य शास्त्र वेत्ता नहीं होता, तो राजगुरु क्या उसको चिकित्सा के लिए नियुक्त करते?" लोगों में ऐसी बातें हो रही थीं।

उस दिन शाम को ब्राह्मदण्डी को विंध्याचल भेजने के लिए राजगुरु स्वयं नगर के द्वार के पास आया।

उसने पहले ही दो राजकर्मचारी, जितवर्मा और शक्तिवर्मा को उसके साथ जाने के लिए नियुक्त कर दिया था। उनका काम यह देखना था कि भयंकर घाटी में कोई खज़ाना मिले, तो कहीं ब्राह्मदण्डी स्वयं उन्हें उठा न ले जाये। परन्तु यात्रा में यदि कोई पूछे कि वे कौन हैं, तो उनको यह बताने के लिए कहा गया था कि वे उनके अंगरक्षक हैं।

ब्राह्मदण्डी को जिसे अपमान के साथ नगर में लाया गया था, अब सम्मान के साथ नगर से बाहर भेजा जा रहा था। कई लोगों ने, जो झुण्डों में जमा हो गये थे, उसके गले में मालाएं भी डालीं। नृत्य और संगीत भी हुआ। बड़े समारोह के साथ ब्राह्मदण्डी को बिदाई दी गई।

इधर जब मान्त्रिक ब्रह्मपुर नगर छोड़कर जा रहा था, तो उधर वन में छिपे केशव और जयमल्ल भी विंध्याचल की ओर जाने के लिए तैयार हो रहे थे। केशव के पिता के लाये हुए कपड़ों को पहनकर वे दोनों क्षत्रिय युवक बन गये थे। तलवार, ढाल,

भाला आदि देखकर कोई यह नहीं कह सकता था कि उनमें से एक गड़ेरिया और दूसरा मान्त्रिक का शिष्य है।

इस प्रकार वे दोनों जब वेश बदलकर जा रहे थे, तो बूढ़े ने ज़िद पकड़ी कि वह भी उनके साथ आयेगा। केशव और जयमल्ल ने उन्हें बताया कि रास्ते में क्या-क्या आपत्तियाँ आ सकती हैं। इस बुढ़ापे में सैकड़ों मील पैदल जाना खतरनाक हो सकता है। इसके अतिरिक्त अनेक ऐसी खतरनाक परिस्थितियाँ आ सकती हैं जिनका अभी अनुमान लगाना असम्भव है। तब भी बूढ़े ने जिद न छोड़ी।

"परन्तु तुम्हें इस रूप में कोई पहचान ले, तो?" केशव ने पूछा।

बूढ़े ने उछलकर कहा, "नगर में जब मैं तुम्हारे लिए कपड़े खरीदने गया, तो मैं अपने लिए भी खरीद लाया था। जरा ठहरो, बताओ तो कि तुम मुझे पहचान सकोगे कि नहीं।" यह कहकर बूढ़ा एक पेड़ के पीछे चला गया और दस बारह मिनट बात फिर आ गया।

बूढ़े को देखकर जयमल्ल और केशव के आश्चर्य की सीमा न रही। रेशमी कपड़े थे। गले में रुद्राक्ष, हाथ में एक माला, कानों में कुण्डल, मुँह पर बिभूति। वह अब एक पंडित-सा लगता था।

"मैं अब तुम दोनों का गुरु हूँ। राजकुमारों को यात्रा पर ले जा रहा हूँ, लोग यही समझेंगे, समझे।" बूढ़े ने खुश होकर कहा।

"यह तो ठीक है गुरु, परन्तु मान लो कि हम मार्ग में किसी नगर में गये और वहाँपंडितों ने तुम
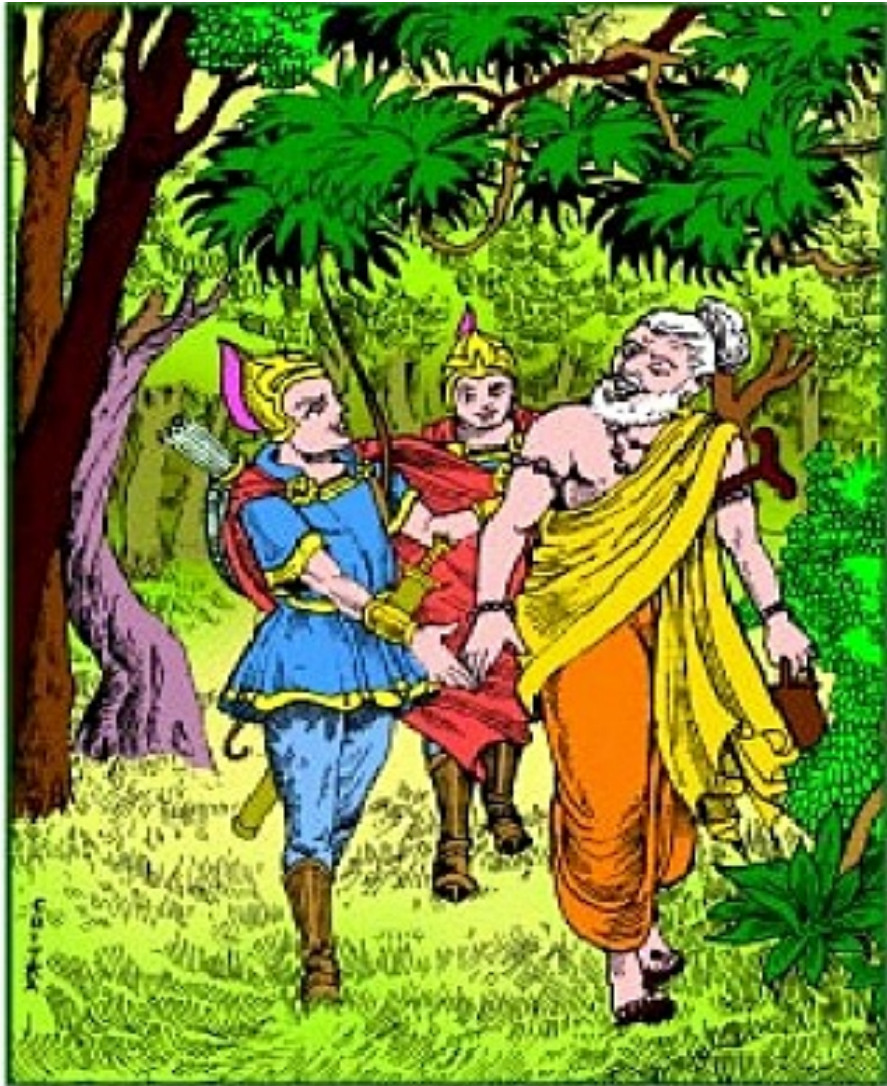
से कुछ प्रश्न पूछा, तो तुम क्या करोगे? तुममें पंडित का ज्ञान तो है नहीं!" जयमल्ल ने पूछा।

"गुरु मौनानन्द हैं। इस यात्रा में सिवाय अपने शिष्यों से किसी और से बात न करेंगे, कह देना।" बूढ़े ने कहा।

केशव को पिता को साथ ले जाना ही उचित लगा। इस समय उसको यहाँ छोड़कर चले जाना ठीक नहीं है। अब तक ब्रह्मापुर राज्य में सबको मालूम हो गया होगा कि हम पिता पुत्र हैं। मेरे सिर की कीमत एक सामन्त राज्य है। इस लालच में यदि किसी ने मेरे पिता को देख लिया, तो मेरा पता जानने के लिए वे जरूर उसे सतायेंगे।

केशव ने पिता की ओर प्रेम से देखते हुए कहा, "बा..।" वह कुछ कहने जा रहा था कि

बूढ़े ने लाल-पीला होते हुए कहा, "बाबा... नहीं...गुरु...।"

केशव और जयमल्ल उसे साथ लिये बगैर न रह सके। केशव पिता के पास आया, उसका हाथ पकड़कर, आगे कदम रखते हुए कहा, "गुरु, चलो, हम अब चलें। अन्धेरा होते-होते हमें कोई गाँव पहुँचना है। रात को वहीं सोकर, सवेरे हम घोड़े खरीद कर उनपर सवार होकर आगे चलेंगे। यदि राजकुमार और उनके गुरु को लोग पैदल चलते देखेंगे, तो क्या सोचेंगे? सन्देह करेंगे। इधर उधर की अफवाहें उड़ायेंगे। इससे हमें नई कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा।"

जंगल में वे दो घंटे चले, अन्धेरा होते-होते वे एक गाँव में पहुँचे। जब वे गली में जा रहे थे, तो चबूतरे पर उन्होंने लोगों की जो बातें सुनीं, उनसे उनको भय और आश्चर्य हुआ।

"ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक दो अंगरक्षकों को लेकर विंध्याचल की ओर जा रहा है। वहाँ एक औषधि है, उस औषधि से वह राजगुरु का फोड़ा ठीक करेगा, जिसे अभी तक कोई ठीक न कर सका। उसी औषधि को लाने के लिए वह विंध्याचल जा रहा है।"

"इसमें कोई धोखा है। हम क्योंकि राजकुमार हैं, लोगों की बातों में हमें दखल नहीं देना चाहिए।" जयमल्ल ने कहते हुए केशव को संकेत किया। फिर चबूतरे पर जमा हुए लोगों से पूछा, "यहाँ कहीं कुछ भोजन मिल सकेगा?"

यह प्रश्न सुनते ही एक वृद्ध ने सामने आकर कहा, "होटल यहीं पास में है। पर मुझे डर है कि वहाँ आपको कुछ मिलेगा कि नहीं। राजा की आज्ञा के अनुसार वहाँ ब्राह्मदण्डी नामक बड़ा वैद्य और उनके दो अंगरक्षक आज रात को वहीं ठहरने जा रहे हैं।"

यह सुनते ही जयमल्ल और केशव का दिल बैठ-सा गया। केशव ने निराश होकर जयमल्ल की ओर देखा। जयमल्ल सोच में पड़ गया। परन्तु बूढ़े ने झट कहा, "यदि यही बात है कि देश भ्रमण पर निकले राजकुमार इस तरह के होटलों में ठहरें, यह कहाँ लिखा है? अरे शिष्यो, चलो चलें।" कहकर वे आगे बढ़े। ***(अभी है)***

बेताल कथाएँ

अहंकारी पंडित

धुन का पक्का विक्रमार्क ने पुनः पेड़ पर से शव को उतारा; उसे अपने कंधे पर डाल लिया और वह श्मशान की ओर बढ़ता हुआ जाने लगा। तब शव के अंदर के बेताल ने कहा, "राजन्, आधी रात का समय है, आँखें फाड़-फाड़कर देखोगे तब भी कुछ दिखायी नहीं पड़ेगा, फिर भी तुम बढ़े जा रहे हो। तुम्हारे इस अंकुठित आग्रह को देखते हुए लगता है कि तुम किसी जटिल कार्य को साधने में लगे हुए हो। कुछ ऐसे व्यक्ति होते हैं, जो अहंकार के नशे में अपने को महान और असाधारण मान बैठते हैं। अपनी शक्ति और सामर्थ्य से भी बढ़कर कार्य साधने का निश्चय कर लेते हैं। उन्हें यह मालूम नहीं कि उनका

अहंकार उन्हें गुमराह कर रहा है। तुम्हें सावधान करने के लिए एक ऐसे ही अहंकारी पंडित की कहानी सुनाऊँगा। थकावट दूर करते हुए उसकी कहानी सुनो।'' फिर बेताल उस पंडित की कहानी यों सुनाने लगा :

मोटेराम ब्रह्मपुर का एक सामान्य किसान था। श्रीचरण उसका इकलौता पुत्र था। बचपन से ही वह आशु कविताएँ सुनाता रहता था। उस की इस प्रतिभा को देखकर परिमित नामक आचार्य ने उसे अपना शिष्य बनाया।

जिसे सीखने और पढ़ने में विद्यार्थियों को दस साल लगते थे, उसे श्रीचरण ने तीन ही सालों में सीख लिया। परिमित ने अपने शिष्य के कौशल की सराहना की और कहा, ''जो मुझे सिखाना था, सिखा दिया। अब तुम दंडकारण्य जाकर गुरुकुल में शिक्षा प्राप्त करोगे तो और उन्नति कर सकोगे।''

परंतु श्रीचरण गुरु की सलाह को अमल में नहीं ला पाया। क्योंकि वह चाहता था कि मेहनती पिता के साथ रहूँ और उसकी सहायता करूँ। एक बार एकराजस्थानी कवि उस गाँव में आया। गुरु परिमित ने श्रीचरण के बारे में बताया और कहा, ''मैं शास्त्र का ज्ञान रखता हूँ, पर कविता के मूल्य को आंकने में असमर्थ हूँ। आप उसकी कविता सुनिये और बताइये कि क्या वह राज सम्मान पाने के योग्य है?''

राजस्थानी कवि ने, श्रीचरण की कविता सुनी और कहा, ''तुम्हारी कविता में व्याकरण व अलंकार शास्त्र से संबंधित दोष हैं। शंखपुर में महानंद नामक एक महापंडित हैं। अगर वे तुम्हें योग्यता-पत्र प्रदान करेंगे तो समझ लो, तुम राज सम्मान के योग्य बन गये।''

श्रीचरण ने, महानंद के बारे में जानकारी प्राप्त की। मालूम हुआ कि वे अपने ही गाँव के संचारी नामक भूस्वामी के दूर के रिश्तेदार हैं। वह उससे मिला।

संचारी ने कहा, ''महानंद एक निराले स्वभाव का है। अगर मैं तुम्हारी सिफ़ारिश करूँ तो वह कहेगा कि तुम कविता के बारे में क्या जानो। एक काम करना। एक अच्छा काव्य रचो और उसे सुनाओ। उसकी प्रशंसा पाओगे तो यह काम बन जायेगा। कुछ लोगों का यह भी कहना है कि वह बड़ा ही अहंकारी है और दूसरों की गलतियाँ

निकालने में उसे आनंद आता है। अन्यों की प्रशंसा वह कभी करता ही नहीं।''

श्रीचरण ने ठान लिया कि काव्य रचूँगा और महानंद की प्रशंसा पाऊँगा। उसने ''श्रीकृष्ण लीलामृत'' नामक काव्य एक हफ्ते भर में लिखा। महानंद की स्वीकृति और प्रशंसा पाने का विश्वास लेकर वह शंखपुर गया और महानंद से मिला।

उस समय महानंद, अपने घर के चबूतरे पर बैठकर, आरंभ नामक एक युवकवि की कविता सुन रहा था। उसमें व्याकरण के जो दोष थे, उनपर वह टिप्पणियाँ सुना रहा था। उन टिप्पणियों को सुनते हुए श्रीचरण हँस पड़ा। महानंद ने, श्रीचरण को ध्यान से देखा और उसकी हँसी का कारण पूछा।

''महोदय, कमल कीचड में जन्म लेता है, वह कितना भी सुंदर क्यों न हो, वह कीचड़ का अलंकार नहीं हो सकता। कीचड़ से अलग करने पर ही कमल अलंकार बनता है। ऐसी स्थिति में दोषों को ठीक करने मात्र से क्या फ़ायदा है? आप सर्वज्ञ हैं। आप जैसे महान पंडित इस प्रकार समय व्यर्थ करते रहेंगे तो क्या फल निकलेगा? इसी को लेकर मैं हँस पड़ा। क्षमा कीजिये, मैं हँसी रोक नहीं पाया।''

महानंद ने, श्रीचरण को नख से शिख तक देखा और कहा, ''जो भी कविता सुनाना चाहता है, उसे चाहिये कि वह व्याकरण के दोषों के बारे में बखूबी जाने। तुम्हारा ज्ञान तो अधूरा है, फिर

भी तुमने मेरी हँसी उड़ाने की चेष्टा की, तद्वारा तुमने भी मेरा समय व्यर्थ किया। जानूँ तो सही, आखिर तुम हो कौन?''

श्रीचरण ने अपना, अपने गाँव का नाम बताया और अपनी अभिलाषा व्यक्त की। इसे सुनकर महानंद एकदम नाराज़ हो उठा और बोला, ''मेरी सेवा-शुश्रूषा करने आये हो। मुझे देखते ही तुम्हें मेरे पैरों पर गिरकर प्रणाम करना था, आशीर्वाद पाना था। पहले किसी और गुरु के पास जाओ और उनसे गुरु का आदर करना सीखो। उसके बाद तुम्हें शिष्य बनाने के विषय में निर्णय लूँगा।'' बड़े ही कर्कश स्वर में महानंद ने कहा।

श्रीचरण निराश होकर गाँव लौटा। संचारी ने परिणाम जानना चाहा तो उसने कहा, ''महाशय, आपने जो कहा, वह सच निकला। महानंद महा अहंकारी हैं। उनसे प्रशंसा पाना मेरे बस की बात नहीं है। उन्हें कविता सुनाने का इरादा ही अब मुझमें नहीं रहा।''

इस घटना के कुछ दिनों के बाद संचारी को महानंद ने एक पत्र भेजा, ''अपने गाँव के श्रीचरण से रचित ''श्रीकृष्ण लीलामृत'' काव्य से कुछ कविताएँ मुझे भेजना जो तुम्हें पसंद हैं। परंतु, इसके बारे में उससे कुछ न बताना।'' यही उस पत्र का सारांश था।

संचारी खुद महानंद से मिलने शंखपुर गया। महानंद ने उसे स्वादिष्ट भोजन खिलाया। भोजन के बाद संचारी ने उसके आतिथ्य की प्रशंसा करते हुए कहा, ''तुम्हारी धर्मपत्नी यशोदा की बनायी मिठाई हरी कांति को फैलानेवाले पूर्ण चंद्र की तरह है। उसमें निहित अमृत को पाने के लिए आतुर राहु की तरह निगलने के लिए तैयार बैठे मेरे गले में वह अटक गया। मैंने जब मुँह खोला, तब तुम्हारी यशोदा ने मिट्टी खानेवाले बालकृष्ण को मुझमें देखा होगा। तुम्हारी यशोदा उस यशोदा माँ की याद दिलाती है।'' इस अर्थ की एक कविता सुनायी।

महानंद ने चकित होकर कहा, ''तुमने जो भी कहा, ऐसा यहाँ कुछ भी नहीं हुआ। किन्तु मेरी पत्नी ने जब अन्न खिलाया, तब उसमें माँ को देखते हुए तुमने भाव-चमत्कारपूर्ण जो कविता सुनायी, वह अद्भुत है। यह कहीं श्रीचरण के काव्य से तो नहीं है?''

संचारी ने ''हाँ'' के भाव में सिर हिलाते हुए

कहा, ''श्रीचरण जब तुम्हारे पास आया था, तभी उसकी कविता सुनकर तुम्हें यह बात बतायी थी।''

इसपर महानंद ने मुस्कुराते हुए कहा, ''एक महाकवि ने कहा है कि कविता कभी भी न बुझनेवाली एक प्यास है। श्रीचरण राजाश्रय में जाता तो अवश्य ही उसका सम्मान होता।''

संचारी ब्रह्मपुर लौटा। उसने श्रीचरण से जब यह बात बतायी तब वह बेहद खुश हुआ। उसके मुँह से बात ही नहीं निकली। कुछ देर बाद अपने को संभालते हुए उसने कहा, ''मैं शंखपुर जाकर उस महाकवि को अपना काव्य न सुनाऊँ तो अहंकारी कहलाऊँगा।'' वह उसी दिन शंखपुर जाने निकल पड़ा।

उस समय महानंद अपने घर के चबूतरे पर बैठकर एक दूसरे कवि की कविता सुन रहा था। श्रीचरण को देखते ही वह तुरंत उठ खड़ा हो गया। श्रीचरण उसके पैरों पर गिरा और बोला, ''गुरुवर, आपको अपना काव्य सुनाने आया हूँ। मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कीजिये।''

महानंद ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, ''आयुष्मान भव, कीर्तिमान भव।'' उसे उठाया और कहा, ''मेरी बात को मानकर तुमने शिष्य परम्परा का पालन किया। मुझे बहुत खुशी हो रही है। परसों पंचमी है। तुम्हारा काव्य पठन उसी दिन से प्रारंभ होगा।''

महानंद ने, अपने ही घर में श्रीचरण के रहने का इंतज़ाम किया।

पंचमी के दिन महानंद ने एक बृहत सभा का
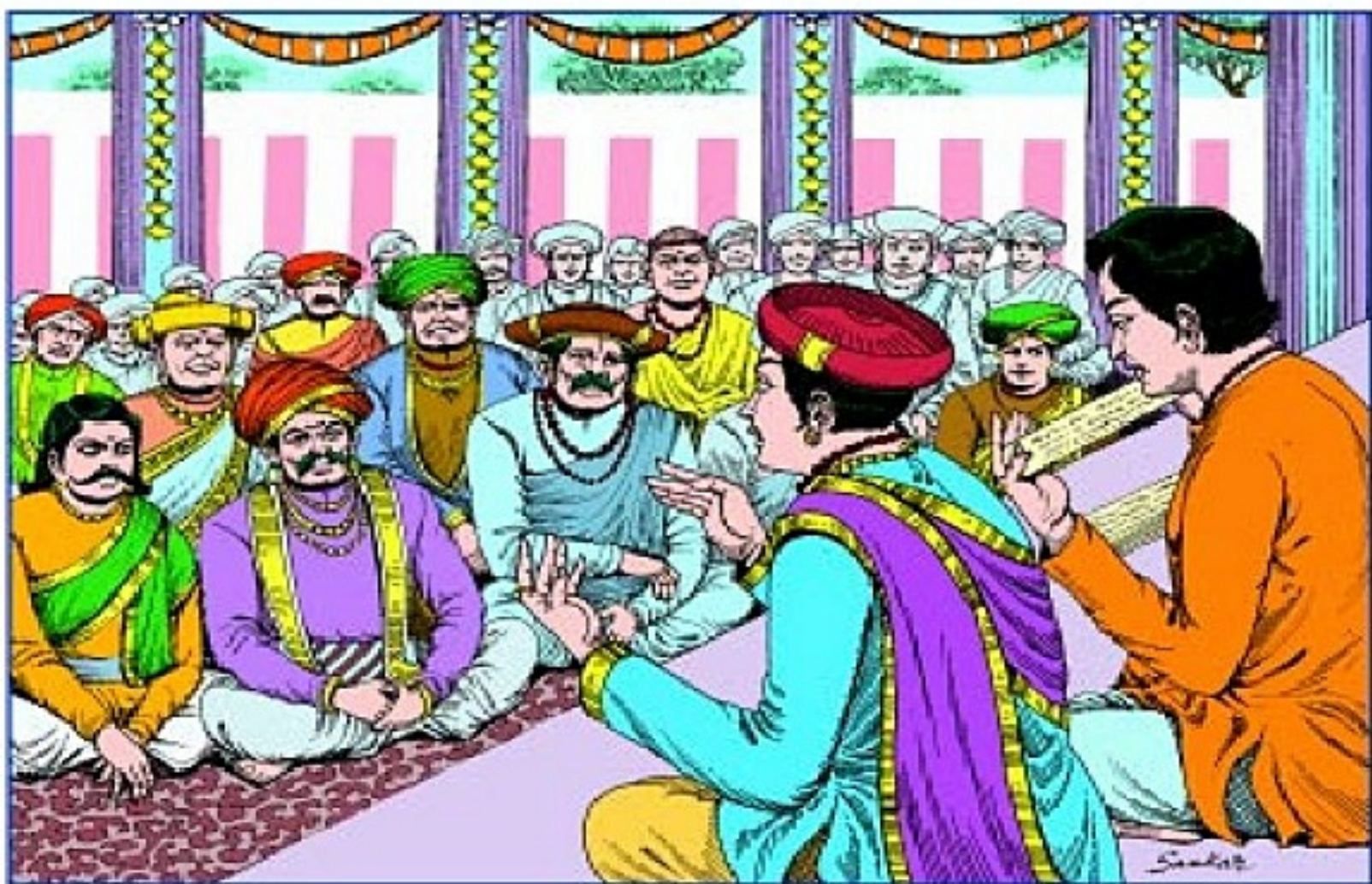
आयोजन किया और श्रीचरण को आश्चर्य में डाल दिया। उस सभा में भाग लेने दूर-दूर प्रदेशों से महाविद्वान, कवि और पंडित आये। उन सबको उपस्थित देखकर इतोधिक उत्साह से श्रीचरण ने काव्य पठन किया।

इसके उपरांत जब महानंद ने उस काव्य की विशिष्टताओं के बारे में विवरण दिया, तब हर्ष ध्वनियों के साथ सभा गूँज उठी।

कहानी बता चुकने के बाद बेताल ने क हा, ''राजन्, निस्संदेह दिखता है कि महानंद अहंकारी पंडित है। यह भी स्पष्ट दिखता है कि सभी साहित्यिक उसे महा पंडित मानते हैं। यही बात उसके रिश्तेदार संचारी ने भी श्रीचरण से बतायी थी। बहुतों का यह भी मानना है कि वह हमेशा दूसरों की ग़लतियाँ निकालता रहता है और अन्यों की कभी भी तारीफ़ नहीं करता। आश्चर्य की बात तो यह है कि ऐसे अहंकारी ने, श्रीचरण की कविता की प्रशंसा की। महानंद में जो आकस्मिक परिवर्तन आया, उसका क्या कारण हो सकता है? कवियों और पंडितों में उसकी जो बदनामी हुई, क्या उससे बाहर निकलने के लिए यह प्रयत्न था? मेरे इन संदेहों के उत्तर जानते हुए भी चुप रहोगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने कहा, ''स्पष्ट है कि कितने ही कवि अपनी कविताओं को सुनाने अक़्सर महानंद के पास आते रहते हैं। श्रीचरण जब उन्हें देखने गया, तब आरंभ नामक कवि अपनी कविता सुना रहा था। ऐसे कवियों की कविताओं में जो व्याकरण व अलंकार दोष हैं, उन्हें निस्संकोच बताते थे, महानंद। इसी वजह से प्रचार हुआ कि वे अहंभावी हैं। श्रीचरण की कविता की महानंद ने भरपूर प्रशंसा की। यह कहना ठीक नहीं कि उनमें कोई आकस्मिक परिवर्तन हुआ। साहित्य के प्रयोजन के लिए कविताओं के दोषों को निकालना, अहंकार नहीं है। सच कहा जाए तो वे लोग अहंकारी हैं, जो महानंद को अहंकारी के रूप में प्रचार करते हैं।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित ग़ायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

[आधार-''वसुंधरा'' की रचना]

हमारा राष्ट्रगान

'जन-गण-मन' गीत का मूल बंगला रूप कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर द्वारा सन १९११ में लिखा गया और आर्य समाज पत्रिका 'तत्व बोध प्रकाशिका' में प्रकाशित किया गया। ठाकुर ने इस पत्रिका का कुछ वर्षों तक सम्पादन किया था।

सन् १९१९ में, एक आयरिश कवि और बेसेण्ट थियोसोफिकल कॉलेज के प्राचार्य जेम्स एच.कजिन्स के निमन्त्रण पर कवीन्द्र आन्ध्रप्रदेश के चित्तूर जिले में मदनपल्ली भ्रमण पर गये।

फरवरी महीने की एक शाम को डॉ. कजिन्स, उनकी पत्नी मारगरेट तथा कुछ छात्रों ने कवि से बंगला गीत गाने का अनुरोध किया। जब गीत की टेक 'जय हे, जय हे...' वे गा रहे थे तब सभी श्रोता उनके साथ मिलकर गाने लगे।

मदनपल्ली में अपने प्रवास के दौरान कवीन्द्र ने गीत का अंग्रेजी में भाषान्तर किया। श्रीमती कजिन्स तब गीत की स्वरलिपि (नोटेशन) तैयार करने लगी। बाद में, अपने संस्मरण में डॉ.कजिन्स ने लिखाः ''...उन्होंने कुछ-कुछ क्षेत्रों, पर्वतों और नदियों के भौगोलिक अंश की तरह गाया और दूसरे छन्द में भारत के धर्मों की सूची प्रस्तुत की।''

जब प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू ने दिल्ली के लाल किले पर, पहली बार १५ अगस्त १९४८ को, राष्ट्रीय ध्वज फहराया, तब सिक्ख रेजिमेण्ट ने श्रीमती कजिन्स के संगीत पर राष्ट्रगान की धुन बजाई। तभी से हम सब उसी धुन को गाते आ रहे हैं।

महान पुरुषों के जीवन की झाँकियाँ - ८

केवल एक न्यायपूर्वक दण्डित !

जर्मनी का राजा विलियम (१७९७-१८८८) इतिहास-प्रसिद्ध शासक था। उसमें अनेक प्रशंसनीय सद्गुण थे। उसका वार्तालाप और आचरण हमेशा सरल होता था। सच बोलना उसे सबसे अधिक पसन्द था।

एक दिन वह अपने राज्य के पूर्वी हिस्से में स्थित पौट्सडम नगर के एक जेल के निरीक्षण पर गया। एक कैदी को देखकर उसने पूछा कि वह जेल में क्यों आया। ''प्रभु, किसी ने हमारे मकान मालिक के घर में चोरी की। जब रक्षकों ने उसका पीछा किया तब चोरी का माल उसने मेरे घर के अहाते में फेंक दिया। मुझे अनुचित ढंग से

सजा दी गई।'' उसने उत्तर दिया।

राजा ने दूसरे कैदी के पास जाकर यही प्रश्न किया। ''मेरे प्रभु, स्थानीय अधिकारी मुझसे ईर्ष्या करता था। एक दिन मेरे गाँव के कुछ लोगों ने उसके विरुद्ध विद्रोह किया; तब उसने मुझ पर यह आरोप लगा कर कि मैंने ही उन्हें भड़काया है, मुझे जेल में डाल दिया।'' कैदी ने यह सफाई दी।

जब राजा ने तीसरे कैदी से यही प्रश्न पूछा तब उसने कहा, ''प्रभु, किसी और ने जाली कागजात बनाकर मुझ पर इल्जाम डाल दिया और मुझे अन्यायपूर्वक जेल में डाल दिया गया।''

जितने कैदियों से राजा ने यह प्रश्न पूछा, सबने वैसा ही उत्तर दिया। सबने अपने को निर्दोष बताते हुए यह जोर देकर कहा कि उन्हें गलत कारणों से वहाँ भेजा गया है।

जब राजा अन्तिम कैदी के पास आया, वह शान्त भाव से खड़ा होकर बोला, ''मेरे प्रभु, मेरे विरुद्ध लगाये गये आरोप सच हैं। मैंने ऐसा काम किया, जो मुझे नहीं करना चाहिये था। मैं अपराधी हूँ।''

''तो ऐसी बात है,'' राजा ने कहा, ''इन निर्दोष व्यक्तियों में तुम्हीं एक मात्र दुष्ट हो। तुम्हें इन शरीफ लोगों को भ्रष्ट करने की इजाजत नहीं मिल सकती।'' उसने मजिस्ट्रेट और जेलर दोनों को बुला कर उस आदमी को तुरन्त रिहा करने का आदेश जारी किया। ***-एम डी***

चन्दामामा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता-५ के विजेताएँ (जून-२००६)

१. अभिषेक मौर्य
डॉ.आर.के.मौर्य, शिवभवन स्टेशन रोड,
पो.परासिया, जि.छिंदवाड़ा (म.प्र)-४८० ४४१

२. महीमां
मनोरंजन प्रसाद श्रीवास्तव, तरी महुल्ला
पोस्ट -आरा, जिला-भोजपुर
(बिहार)-८०२ ३०१.

३. सुरेशकुमार तेजी
५५, नवल नगर, गीता भवन के सामने
जोधपुर (राज.), पिन-३४२ ००१.

४. उत्सव गायकवाड,
द्वारा.राजेन्द्र गायकवाड,
आकाशवाणी कॉलोनी, बैतूल,
पिन-४६० ००१, बैतूल (मध्य प्रदेश).

चन्दामामा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता-४ के उत्तर :

१ ग्राफोलजि
२ ब्लादिमीर, पोलैण्ड की प्राचीन गाथा
३ २४
४ एन.जे.कोण्टे (दो शताब्दियों के पूर्व)
५ चीन के देशज।
६. निर्णय स्वयं लें।
७. मोटापे की दवा।

समाचार झलक

राजनीतिज्ञों के लिए पाठ्यक्रम

नई लोक सभा के संगठन तथा नवनिर्वाचित सदस्यों के शपथ-ग्रहण तथा सत्रों में उनके भाग लेने के तुरन्त बाद, सांसद के रूप में प्रभावशाली ढंग से काम करने में सहायता के लिए उन्हें एक अनुकूलन पाठ्यक्रम में उपस्थित होना होगा। त्रिवेन्द्रम के केरल विश्वविद्यालय में इस शिक्षण सत्र से एक नया पाठ्यक्रम आरम्भ होने जा रहा है जिसका नाम होगा, ''डिप्लोमा इन प्रोफेशनल पोलिटिकल मैनेजमेण्ट''। पाठ्यक्रम का उद्देश्य ग्राम समितियों, पंचायतों तथा स्थानीय स्वायत्त संस्थाओं के सदस्यों को लाभ पहुँचाना है। प्रत्येक बैच में ४० सदस्य होंगे और पाठ्यक्रम की अवधि छः महीने की होगी।

डॉक्टर ही डॉक्टर

घर में डॉक्टर का होना हमेशा उपयोगी माना जाता है क्योंकि किसी के बीमार पड़ जाने पर देखभाल करनेवाला पास में ही होता है। कर्नाटक के बगलकोट जिले में मुधोल तालुक के सोन्नाड परिवार में एक नहीं, सात डॉक्टर हैं! मगर उनमें से एक भी चिकित्सक नहीं है। सभी सातों डॉक्टर डॉक्टरेट (पी-एच.डी.) उपाधि धारक हैं। परिवार के जनक रमन्ना के ग्यारह बच्चे थे। तीन बेटों और चार बेटियों ने उच्चतर अध्ययन कर पी-एच.डी की उपाधि अर्जित की। गिनीज बुक ऑफ रिकार्ड्स में उन्हें प्रविष्टि मिल गई है।

नागालैण्ड की एक लोक कथा

मौत की घाटी की खोज में

मणिपुर की राजकुमारी मधुवन्ती एक सुन्दर कन्या के रूप में बढ़ रही थी और इसलिए इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि उसका हाथ माँगने के लिए अनेक प्रेमी आने लगे। पर उसने कोई न कोई कारण बताकर उन सब के साथ बिवाह करने से इनकार कर दिया। उसके माता-पिता उसे बहुत प्यार करते थे। उन्हें सन्देह होने लगा कि क्या उन्हें पोता या पोती का भोला मुखड़ा देखे बिना ही इस दुनिया से कूच करना होगा।

तभी एक सरदार का बेटा मोनीसिंह मधुवन्ती से विवाह करने का प्रस्ताव लेकर आया। राजकुमारी उसके प्रस्ताव को ठुकरा न सकी, क्योंकि वह सुन्दर होने के साथ-साथ दयालु और भद्र था। यद्यपि मोनीसिंह राजपरिवार का नहीं था, फिर भी राजा और रानी को इससे बहुत प्रसन्नता हुई। विवाह की तिथि निश्चित कर दी गई और तीन दिनों तक पूरे राज्य में हर्षोल्लास छाया रहा।

किन्तु, तभी सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण घटित हो गया। विवाह से एक दिन पूर्व राजकुमारी वैवाहिक अनुष्ठान के रूप में नदी में स्नान करने गई और वापस नहीं लौटी। उसकी दासियाँ रोती-बिलखती हुई जब महल में पहुँची तो सारा राज्य शोक सागर में डूब गया। मधुवन्ती के माता-पिता को याद आया कि राजकुमारी विवाह से पहले शापमुक्त नहीं हो पाई थी और विवाह के प्रस्तावों को इनकार करने के पीछे उसके मन में अवश्य यही बात रही होगी। सम्भवतः मोनीसिंह के साथ विवाह के लिए राजी होने से पहले शाप की अवधि का स्मरण उसे नहीं रहा होगा।

सबसे अधिक भग्न-हृदय युवक था। वह कुछ दिनों तक इस आशा से राजधानी में ही रहा कि

राजकुमारी का शव बहकर नदी तट पर आ जाने के बाद घर जाने से पहले उसे आखिरी बार देख लेगा। एक बार राजा और रानी ने यहाँ तक निश्चय कर लिया था कि वे इसे अपना दत्तक पुत्र बनाकर राजकुमार घोषित कर देंगे।

परन्तु मोनीसिंह को यह स्वीकार नहीं था। उसने राजा और रानी से कहा कि राजकुमारी मधुवन्ती मौत की घाटी में चली गई होगी और वह वहाँ जाकर उसे वापस लायेगा। राजा और रानी यह सुन कर चकित रह गये। कोई भी निश्चित रूप से नहीं कह सकता था कि ऐसी कोई घाटी भी है। लेकिन मोनीसिंह का कहना था कि राजकुमारी का शरीर कहीं दिखाई नहीं पड़ा, इसलिए वह कहीं न कहीं जीवित होगी। और वह सम्भवतः एक ही स्थान हो सकता है – मौत की घाटी। और वह किसी प्रकार वहाँ जाने का मार्ग ढूंढ़ लेगा। भारी दिल के साथ राजा और रानी ने उसे विदा किया।

मोनीसिंह अपने माता-पिता से मिलने नहीं गया, क्योंकि वह जानता था कि वे लोग उसे मौत की घाटी में जाने नहीं देंगे। ऐसी घाटी के अस्तित्व के बारे में सबको सन्देह था, लेकिन मोनीसिंह को नहीं। जहाँ भी यह स्थान होगा, वह अवश्य जायेगा, उसने दृढ़ संकल्प कर लिया।

अस्तु, उसका पहला उद्देश्य था मौत की घाटी के मार्ग का पता करना। वह साधु, सन्तों और संन्यासियों से पूछ-ताछ करता जगह-जगह भटकता रहा। वह अत्यन्त वृद्ध व्यक्तियों से प्रश्न करता, ''क्या आप मौत की घाटी का रास्ता बता सकेंगे?'' वे सिर्फ करुणा भरी दृष्टि से उसके चेहरे को निहारने लगते। कोई कैसे जीवन के बहार के दिनों में मौत की बात सोचता है? उन्होंने कभी ऐसी घाटी के बारे में सुना ही नहीं तो रास्ता बताना तो दूर की बात है।

आखिर में, मोनीसिंह की मुलाकात झुर्रीदार आँखोंवाले एक बड़े बुजुर्ग से हुई। उसने युवक से मौत की घाटी में जाने का कारण पूछा। मोनीसिंह ने अब तक किसी को यह नहीं बताया था।

जब बुजुर्ग ने उसकी मार्मिक कहानी सुनी तो उसके चेहरे पर एक हल्की मुस्कान उभर आई। ''मैं वहाँ का मार्ग नहीं बता सकता, लेकिन मैं एक बूढ़ी औरत के पास जाने का मार्ग बतसकता

हूँ; कोई नहीं जानता वह कितनी उम्र की है, पर हमलोगों का विश्वास है कि वह दो सौ या तीन सौ वर्ष की जरूर होगी। वह अवश्य मौत की घाटी के बारे में जानती होगी। लेकिन ध्यान रखो, यात्रा के पूर्व तुम्हें काफी कुछ तैयारी करनी होगी। जैसे, तुम्हें किसी स्त्री का मुख नहीं देखना होगा और न स्त्रियों द्वारा बना भोजन खाना होगा। तुम्हें ४१ दिनों तक प्रतिदिन तीन बार स्नान करना होगा और वृद्धा स्त्री को भेंट करने के लिए श्वेत रेशमी वस्त्र ले जाना होगा। जब तुम इन कठिन नियमों का पालन कर शुद्ध मन और शुद्ध हृदय के साथ मेरे पास आओगे, तब मैं इन पर्वतों के उस पार उस वृद्धा की झोंपड़ी तक पहुँचने का दिशा-निर्देश कर दूँगा।''

मोनीसिंह ने वचन दिया कि वह उसके सभी आदेशों का पालन करेगा और बयालिसवें दिन पुनः उसके पास उपस्थित होगा। वह ४१ दिनों तक किसी स्त्री से नहीं मिला; वह तीन बार नहा कर स्वयं भोजन बनाकर सिर्फ एक बार खाता रहा और रात-दिन प्रार्थना करता रहा।

जब मोनीसिंह उस बुजुर्ग के पास लौटा तब उसने मोनीसिंह को एक थैला, एक भाला, एक मग, कुछ आहार तथा चावल की शराब दी। बूढ़ी स्त्री को देने के लिए उसने एक शाल भी दिया। मोनीसिंह तुरन्त कठिन यात्रा पर चल पड़ा और पर्वत के घने जंगलों और तराइयों को पार करने लगा। पर्वतों की चढ़ाई में उसे कठिनाई नहीं हुई परन्तु जब वह घाटी के जंगलों में पहुँचा तब उसे मालूम नहीं पड़ा कि वृद्धा की झोंपड़ी तक जाने के लिए वह किस दिशा में मुड़े।

कई दिनों तक भटकने के बाद, अन्त में, जंगल के एक खुले स्थान में उसे एक मात्र झोंपड़ी दिखाई पड़ी। उसने दरवाजा खोला और देखा कि झुर्रीदार चेहरे की एक अत्यन्त वृद्धा स्त्री बैठी है और उसके हाथ और पाँव एक चारपाई पर पड़े हैं। उसने अपने थैले से श्वेत रेशमी शाल निकालकर उसे भेंट किया। बूढ़ी स्त्री का चेहरा अचानक खिल उठा। ''तुम मुझसे क्या चाहते हो, बेटे?'' उसने पूछा।

''मैं मौत की घाटी में जाना चाहता हूँ, दादी माँ।'' मोनीसिंह ने कहा।

स्पर्श नहीं करना। केवल उससे बात करना और उसके उत्तर की प्रतीक्षा करना।'' बूढ़ी स्त्री ने उसे घाटी का मार्ग बताते हुए रात में वहाँ चाँदनी छिटकने का इन्तजार करने के लिए कहा।

मोनीसिंह अन्धेरा होते ही मौत की घाटी के लिए चल पड़ा और वहाँ पहुँचकर वृक्षों की पर्णावलियों से देखने लगा कि चाँद निकल रहा है कि नहीं। सौभाग्य से उसे कोई जंगली जानवर नहीं मिला हालांकि वह हाथ में भाला लिये सावधान था। अचानक आसमान में चाँद दिखाई पड़ा और उसकी रोशनी में एक खुले स्थान में फूलों के पौधों के बीच टहलती हुई कुछ आकृतियाँ नजर आईं। शीघ्र ही राजकुमारी से मिलती-जुलती आकृति उसने देखी और दौड़कर उत्तेजना में उसे पकड़ते हुए कहा, ''हे राजकुमारी! मेरे साथ चलो। मैं तुम्हें तुम्हारे माता-पिता के पास ले जाऊँगा!'' लेकिन यह क्या? राजकुमारी अदृश्य हो गई। बेचारा मोनीसिंह ! राजकुमारी फिर वापस नहीं आई।

वह सुबह तक वहीं इन्तजार करता रहा और बूढ़ी स्त्री के पास लौट आया। उसने धैर्य के साथ उसकी बात सुनी और समझाया, ''दिन भर यहीं ठहर जाओ और आज रात को फिरअपनी प्रेमिका की खोज में वहाँ जाओ। लेकिन जब वह मिल जाये तो उसे छूना नहीं।''

मोनीसिंह ने वैसा ही किया और रात होते ही फिर वह मौत की घाटी में पहुँचा। लेकिन आज उसने अपने साथ भाला नहीं रखा। उसे सन्देह

''बस, इतना ही, बेटे?'' स्त्री ने उसे प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा।

''हाँ, दादी, मैं अपनी प्रेमिका राजकुमारी मधुवन्ती से मिलना चाहता हूँ।'' मोनीसिंह ने अपनी कहानी बताते हुए कहा, ''मैं उसे वापस महल में ले जाना चाहता हूँ और यदि वह राजी होगी तो मैं उससे विवाह करना चाहूँगा।''

''मैं नहीं कह सकती कि तुम घाटी में उससे मिल सकोगे या नहीं, लेकिन मृत व्यक्ति चाँदनी रात में वहीं आता है। मैं तुम्हें सावधान किये देती हूँ कि यदि वह तुम्हें वहाँ मिल जाये तो उसे

था कि उसके हाथ में भाला देखकर राजकुमारी ने उसे पहचाना नहीं होगा। चाँद ने जैसे ही अपनी धवल आभा बिखेरी कि आकृतियाँ पु नः दिखाई पड़ने लगीं। मोनीसिंह ने बड़ी आसानी से उनमें राजकुमारी को पहचान लिया। उसने सच्चे हृदय से प्रार्थना की, "हे प्रभु, अपनी प्रियतमा तक पहुँचने और उससे बात करने के मेरे लोभ को संयम में रखें।"

आश्चर्यों का आश्चर्य! राजकुमारी ने उसे दूर से पहचान लिया और उसके पास दौड़ी आई। "मोनीसिंह! तुम मेरी तलाश में यहाँ आये हो! इस जगह का पता कैसे लगाया?"

मोनीसिंह ने इस बात का ध्यान रखा कि वह राजकुमारी को स्पर्श न करे। उसने राजकुमारी के नदी में स्नान करते समय अदृश्य हो जाने से लेकर अब तक की साहसिक यात्रा के बारे में उसे सब कुछ बता दिया। "क्या मेरे साथ संसार में वापस चलोगी? मैं तुम्हें महल में वापस ले जाऊँगा और तुम्हारे माता-पिता की आज्ञा से हमलोग विवाह कर लेगें।"

"सच्चे हृदय से तुम्हारे साथ चलना चाहती हूँ मोनीसिंह!" मधुवन्ती ने कहा, "तुम आगे-आगे चलो, लेकिन कभी पीछे मुड़कर मुझे देखना नहीं। मैं तुम्हारे पीछे-पीछे चलती रहूँगी। पर्वत पर चढ़ने के बाद मैं तुम्हें नाम से पुकारूँगी। तब तुम मुझे मुड़कर देख सकते हो!"

मोनीसिंह को राजकुमारी पर पूरा विश्वास था जिसने अब उसके लिए अपना सच्चा प्यार सिद्ध कर दिया था। जब उसने मौत की घाटी पार करके जंगलों से होते हुए पर्वत पर चढ़ना शुरू किया, सबेरा हो गया। तभी धीमे से उसे अपना नाम सुनाई पड़ा। बड़ी आशा के साथ उसने पीछे मुड़ कर देखा; राजकुमारी सचमुच मुस्कुरा रही थी। अब उसमें उसका हाथ पकड़ने की हिम्मत आ गई और दोनों महल की ओर चल पड़े।

अपनी प्यारी बेटी को सही सलामत देखकर राजा और रानी की खुशी का ठिकाना न रहा। वे मधुवन्ती और मोनीसिंह के विवाह की तैयारी करने लगे। मोनीसिंह को युवराज भी घोषित कर दिया गया। दोनों सुखपूर्वक जीवन बिताने लगे।

मोनीसिंह ने किसी को यह नहीं बताया कि कैसे उसने मौत की घाटी की खोज की। यह रहस्य सिर्फ वही जानता था।
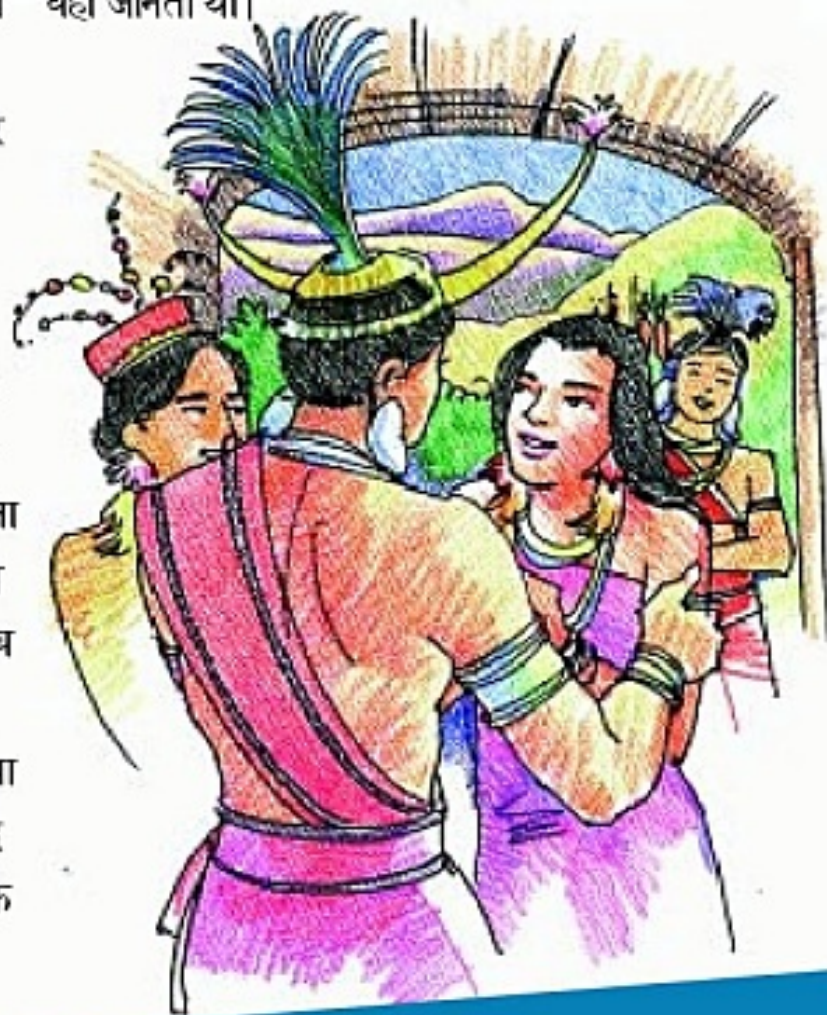
पिंजडे का तोता

रामचंद्र कृष्णापुर के ज़मींदार के दीवान में काम करता था। वह अपनी पत्नी जानकी और दोनों बच्चों के साथ सुखी जीवन बिता रहा था। बेटा मुरली ग्यारह साल का था तो बेटी लक्ष्मी दस साल की थी। रामचंद्र अपने बच्चों को बहुत चाहता था। काम से लौटते समय वह अवश्य ही उनके खाने के लिए मिठाइयाँ या गुडियाँ ले आया करता था।

एक दिन रामचंद्र परिवार सहित ससुराल गया। वहाँ हर साल एक बड़ा त्योहार मनाया जाता था, जिसमें भाग लेने वह वहाँ जाया करता था। मार्ग-मध्य में उन्होंने आम के एक बग़ीचे में आराम किया। तब उस बगीचे के पक्षी-समूह के कलरवों ने बच्चों को बहुत ही मुग्ध किया। उनकी चहचहाटें उन्हें बेहद पसंद आयीं। जब वे एक हाट में गये, तब मुरली ने एक तोता और ज्योतिषी को देखा। ज्योतिषी के कहने मात्र से वह तोता पिंजडे से बाहर आता था और एक पत्र उसके हाथ में थमा देता था। फिर उसके दिये बीजों को लेकर पिंजडे के अंदर चुपचाप चला जाता था। यह दृश्य मुरली को बहुत पसंद आया। उसने पिता से एक ऐसे ही तोते को खरीदने के लिए हठ किया।

"देखो, तोता स्वतंत्र पक्षी है। ऐसे तोते को पिंजडे में बंद रखना ग़लत बात है। उसकी स्वतंत्रता को छीनना ठीक नहीं," पिता ने समझाने की बहुत कोशिश की। पर मुरली टस से मस न हुआ। उसका हठ जोर पकड़ता गया। घर लौटने के बाद रामचंद्र एक तोता घर ले आया। उसे एक सुंदर पिंजडे में बंद रखा गया। मुरली दिन भर उसी के साथ खेलता रहता था।

एक दिन अचानक मुरली बीमार पड़ गया। तीन दिनों तक वह पलंग पर ही लेटा रहा। वैद्य ने आकर उसकी जांच भी की। वैद्यों ने उसकी जांच के बाद कहा, "यह एक प्रकार का विष ज्वर है। दवाइयाँ लेती रहनी होंगी और दो हफ्तों तक पलंग

से उतरना तक नहीं चाहिये। अगर लापरवाही बरती गयी तो यह ज्वर और बढ़ेगा और अधिक दिनों तक लेटे ही रहना पड़ेगा।''

इस वजह से मुरली दो हफ्तों तक पलंग पर ही लेटा रहा। दवाएँ खाते रहना, पलंग से न उतरना उसके लिए बिल्कुल मुश्किल का काम हो गया। उसे लगा, मानों उसके हाथ-पांव बांध दिये गये हों। बुखार थोड़ा-बहुत कम तो हो गया, पर उसके माता-पिता ने उसे बाहर जाने नहीं दिया । खिड़की से वह उन बच्चों को देखता रहता था, जो आराम से खेलते-रहते थे। वह उन्हीं की तरह खेलना चाहता था, पर लाचार था। अपनी लाचारी पर उसकी आँखों में आँसू उमड़ आते थे।

मुरली साथ ही यह भी देखता रहा कि पिंजडे में बंद तोता उसकी माता के दिये दाने खा रहा है और अंदर ही इधर-उधर घूम-फिर रहा है। उसे वह खुश दिखायी नहीं पड़ा। उस विवश तोते को देखकर मुरली को दुख होता था।

अब मुरली की तंदुरुस्ती बिल्कुल ठ ीक हो गयी। वैद्यों ने कह दिया कि अब वह बाहर जाकर घूम ने-फिरने के लायक़ हो गया। माँ ने उस दिन गरम पानी से नहलवाया और कहा, ''अब जाओ और दोस्तों के साथ खेलो।''

मुरली पिंजडे को लेकर अपने कमरे में गया और पिंजडे के दरवाज़े को खोलते हुए उसने कहा, ''पंद्रह दिनों तक बिना हिले-डुले पलंग पर लेटा रहा। लगा कि वह एक जेल है। अब मैं जान गया कि यों रहना कितना मुश्किल काम है। तुम्हें पिंजडे में क़ैद करके तुम्हारे साथ बड़ा अन्याय किया। अब जाओ, आराम से उड़ो। तुम्हें पूरी स्वतंत्रता है।'' कहते हुए उसने तोते को पिंजडे से निकाला और छोड़ दिया।

तोता फुर्र-से उड़ गया। मुरली का चेहरा आनंद से खिल उठा।

- श्रीनिधि, मधुरै

पुत्रीः मैंने अभी-अभी एक रुपये का सिक्का निगल लिया। मुझे शीघ्र डॉक्टर के पास ले चलिये।

पिताः नहीं, डॉक्टर एक सौ रुपये निगल जायेगा।

एम.आर. गणेशकुमार, तिरुनिनरवुर

अजीब सपना

शिव पच्चीस साल की उम्र का अशिक्षत युवक था। वह मनुष्यों से अधिक जंतुओं को चाहता था। वह मेमनों को गोद में लेता था और उन्हें प्यार से चूमता रहता था। गाँव के कुत्तों के साथ वह दौड़ता रहता था। घर में घुसे चूहों और छिपकलियों को बड़ी चालाकी से पकड़ता था, उन्हें थैली में बंद करके गाँव के बाहर छोड़ आता था।

चमन उस गाँव में दूध का व्यापार करता था। नीलवेणी उसकी इकलौती बेटी थी। शिव उसे बहुत चाहता था। एक दिन शाम को वह गाँव के बाहर नीम के पेड़ के नीचे बैठकर गुनगुना रहा था, तभी नीलवेणी वहाँ पानी भरने आयी।

अगल-बग़ल में कोई नहीं था, इसलिए शिव ने साहस बटोरकर उससे कहा, ''मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ। क्या, तुम्हें यह शादी पसंद है?''

''इसके बारे में मेरे पिता से पूछना'' यह कहकर हँसती हुई वह वहाँ से चली गयी।

शिव ने भांप लिया कि नीलवेणी को यह प्रस्ताव पसंद है तो उसने उसके पिता चमन से मिलने का निश्चय किया। शिव की बातें सुनकर नीलवेणी का बाप एकदम नाराज़ हो उठा और कहने लगा, ''बिल्कुल अनपढ़ हो। कोई नौकरी नहीं करते हो। चूहों और छिपकलियों को पकड़ने का काम करते हो। तुम अव्वल दर्जे के सुस्त हो। ऐसे बेकार आदमी से अपनी बेटी की शादी करूँ? असंभव। जा, जा।''

शिव को लगा कि चमन ने उसका घोर अपमान किया। वह दुखी और निराश हो गया। उसने महसूस किया कि चमन की बात में सच्चाई है। वह कर भी क्या सकता है? उसे कोई काम भी नहीं देगा तो शादी करके पत्नी को खिलायेगा कहाँ से। यही सब सोचता हुआ वह सो गया। उस दिन रात को उसने एक अजीब सपना देखा। शिव समुद्र में तैर रहा है। पास ही, एक काला लंबे बालोंवाला आदमी डूब रहा है। उसको बचाने के

राहुल आहुजा

उद्देश्य से वह उसे किनारे तक ले आता है। उस समय एक बड़ी लहर उठती है और उसके प्रवाह में बहते हुए दोनों किनारे आ जाते हैं। परंतु, लंबे बाल वाला एक गढ्ढे में गिर गया और शिव रेत के एक टीले पर आ गिरा। दूसरे ही क्षण उसकी आँखें खुल गयीं।

शिव की समझ में नहीं आया कि इस सपने का क्या मतलब हो सकता है। गाँव के लोग कहा करते हैं कि जंगल के उस तरफ़ की पहाडी गुफ़ा में जो तिरछी आँखवाला है, वह ऐसे सपनों के मतलब समझता है और समझाता भी है। वह इन सपनों को साकार करने के उपाय भी सुझाता है। उस अजीब सपने के मतलब को जानने के लिए शिव उस बाबा से मिलने निकला।

जंगल के बीचों बीच एक जगह पर एक पतला रास्ता था। उस रास्ते से होते हुए जब वह जाने लगा, जोर की वर्षा होने लगी। पास ही के देवी के उजडे मंदिर में उसने आश्रय लिया। देखते-देखते चारों ओर अंधेरा छा गया।

उस समय एक बैलगाडी वहाँ आयी। उसे देखते ही शिव की जान में जान आयी। तेज़ी से वह उसके पास पहुँचा। गाड़ी हांकनेवाला दिखाई तो नहीं पड़ा पर उसने देखा कि गाडी के अंदर कोई आदमी लेटा हुआ है। वह गाड़ी के अंदर गया, उस आदमी को गौर से देखा और जाना कि वह आदमी सख्त बीमार है। उसका बदन बुख़ार के कारण जला जा रहा है। उसे लगा कि तुरंत इस आदमी का इलाज करवाया न जाए तो
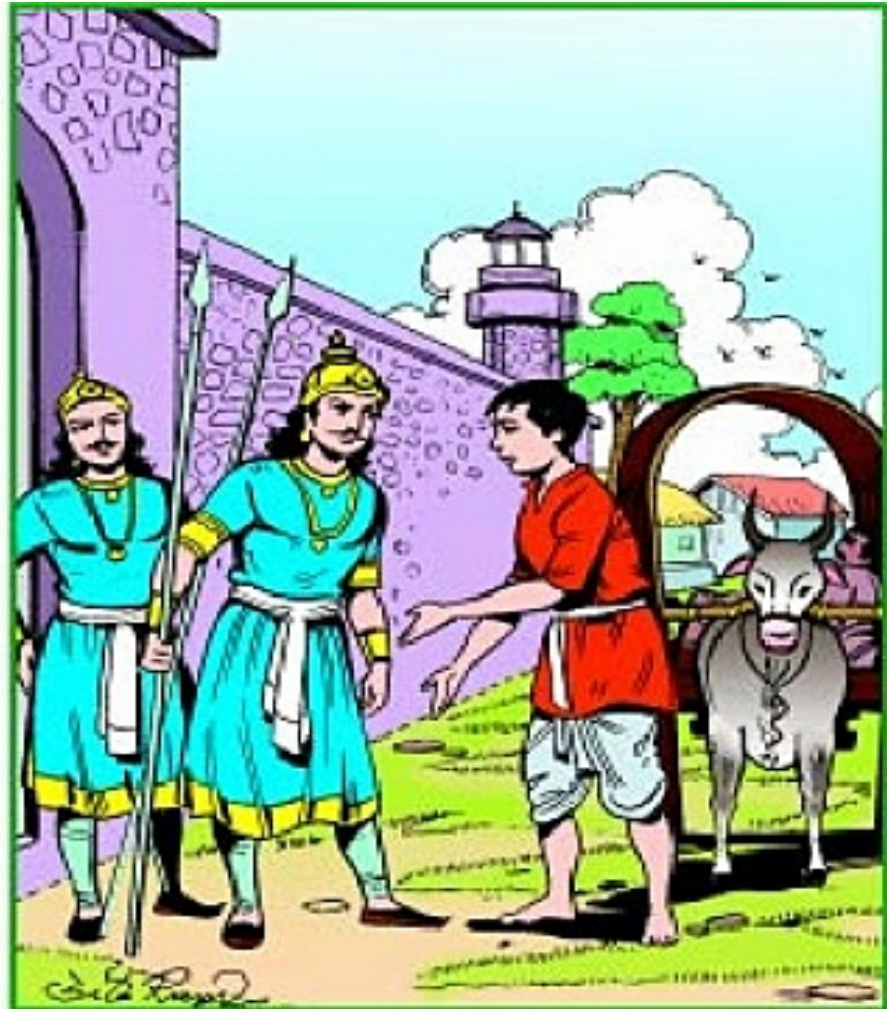
उसकी मौत निश्चित है। उसने गाड़ी को राजधानी की ओर मोड़ा।

राजधानी पहुँचते-पहुँचते सूर्योदय हो गया। शिव ने गाड़ी रोकी और वहाँ खड़े सैनिकों से उसने पूछा, ''महाशय, समीप ही कोई वैद्य है?''

संदेह भरी दृष्टि से देखते हुए सैनिकों ने उससे पूछा, ''तुम कौन हो?'' कहते हुए एक सैनिक ने अंदर झांका। बस, एकदम वह चिल्ला उठा ''बाप रे, यह आदमी तो महाचोर लट्टू है।''

सैनिकों ने गाडी के अंदर ढूँढा तो उन्हें उसमें एक पेटी मिली। उसमें गहने व अशर्फियाँ भरी पड़ी थीं।

''लगता है, तुम महाचोर के अनुचर हो।'' कहते हुए एक सैनिक ने शिव का गला पकड़ लिया।

शिव दर्द के मारे कराहने लगा और कांपते हुए स्वर में कहने लगा, ''साहब, मैं चोर नहीं हूँ। अगर चोरी करने का साहस ही होता तो मैं आपकी पकड़ में नहीं आता। कल रात को मैंने एक अजीब सपना देखा। उसका मतलब जानने केलिए गुफा में आसीन तिरछी आँखवाले बाबा से मिलने निकला और मार्ग मध्य में इस बीमार आदमी को देखा। इसका इलाज कराने यहाँ ले आया और आपके चंगुल में फंस गया।''

सिपाही ने तुरंत उसका गला छोड़ते हुए कहा, ''पहले ही यह बता सकते थे। मैं भी उस तिरछी आँखवाले बाबा का भक्त हूँ। हर अमावास्या के दिन जाता हूँ और उनके दर्शन कर आता हूँ। परंतु, एक सैनिक होने के नाते मेरा फर्ज़ बनता है कि तुम्हें महाराज के पास ले जाकर खड़ा करूँ। वे ही यह निर्णय करेंगे कि तुम उस महाचोर के अनुचर हो या बाबा के भक्त हो।''

शिव को दरबार में सिंहासन पर आसीन महाराज के पास ले जाया गया। सिपाही ने पूरा विवरण सविस्तार महाराज को सुनाया।

राजा ने शिव को ध्यान से देखा और गंभीर स्वर में पूछा, ''अच्छा, तो तुम महाचोर लड्डू के अनुचर हो, कहो, तुम्हें क्या कहना है?''

शिव ने हाथ जोड़कर कहा, ''महाराज, मैं लड्डू का अनुचर नहीं हूँ।'' फिर उसने जो अजीब सपना देखा, उसके बारे में बताया।

राजा ने मुस्कुराते हुए, पास ही बैठे राजगुरु की ओर देखा। राजगुरु ने शिव से कहा, ''उस

अजीब सपने में डूबते हुए उस झुर्रियों वाले आदमी को बचाने के प्रयत्न में किनारे पर आकर बिना पानी मछली की तरह फंस गये।'' फिर उसने राजा के कहा, ''यह दोषी नहीं है। इसे क्षमा कर दीजिये।''

तब बड़े ही उत्साह के साथ शिव ने, राजगुरु से कहा, ''धन्यवाद। मुझे उस तिरछी आँखवाले बाबा के दर्शन के लिए जाने से बचा लिया।''

इतने में, बगल के कमरे से बारह सालों की उम्र की राजकुमारी चीखती-चिल्लाती हुई, अपनी वेणी को इधर-उधर हिलाती हुई वहाँ आयी। शिव ने तुरंत देखा कि एक छिपकली उसकी वेणी में चिपककर बैठी है, इसीलिए राजकुमारी चीख रही है।

शिव तत्क्षण ही आगे बढ़ा और छिपकली के गले को अपनी दोनों उंगलियों के बीच में दबाकर पकड़ लिया। राजकुमारी चकित होकर देख ही रही थी कि शिव ने छिपकली को राज प्रासाद की दीवार के उस पार फेंक दिला।

''कितने साहसी हो! छिपकलियों से क्या तुम्हें डर नहीं लगता?'' राजकुमारी ने शिव से पूछा।

शिव ने विनय-भरे स्वर में कहा, ''हमारे गाँव में, जिस किसी के घर में जो चूहे या छिपकलियाँ होते हैं, उन्हें पकड़ लेता हूँ और गाँव के बाहर छोड़ आता हूँ। कहते हैं, छिपकलियों और बिल्लियों को मारना महापाप है।''

महाराज ने प्रसन्न होकर शिव से कहा, ''राज प्रासाद में छिपकलियों को पकड़ने का ही काम नहीं बल्कि अन्य कीडे-मकोड़ों को भी दूर रखने की जिम्मेदारी सौंपता हूँ। यह नौकरी करोगे?''

''इससे बढ़कर और क्या चाहिये, महाराज'' सिर झुकाकर शिव ने कहा। ''अन्धा क्या माँगे? दो आँख। मेरे तो भाग्य ही खुल गये। मुझे लोग सुस्त और बेकार समझते हैं। वैसे कीड़ों-मकोड़ों को पकड़ने के अलावा मुझे कुछ आता भी नहीं है। आप की कृपा से मेरा जीवन सुधर गया।

यों सुस्त शिव को राजा के यहाँ नौकरी मिली। यह विषय जानकर चमन ने अपनी बेटी नीलवेणी की शादी बड़े ही धूमधाम से शिव से करायी।

रतन की फाँसी का फंदा

पच्चीस साल पहले रतन उस गाँव में आया था। उस समय उसके पास कुछ नहीं था। परंतु आज वह उस गाँव के धनी किसानों में से एक है। वह कहता रहता है कि रात-दिन मैंने मेहनत की, जिसके परिणामस्वरूप आज मैं संपन्न किसान बन पाया। परंतु गाँव के लोग उसे महा कंजूस मानते हैं और उसकी नीचता पर ताने मारते रहते हैं। उसे ऐसा वृक्ष मानते हैं, जिससे किसी को किसी भी प्रकार का फ़ायदा नहीं होता।

उस साल समय पर वर्षा हुई, इसलिए उड़द दाल की अच्छी फ़सल हुई। लाभदायक क़ीमत मिली, इसलिए किसानों ने फ़सल उसी समय बेच डाली। परंतु रतन ने ऐसा नहीं किया। उसने उम्मीद बांध रखी थी कि और अधिक दाम मिलेगा, इसलिए बिना बेचे ही उसे महफ़ूज़ रखा।

परंतु उड़द के दाम में कोई बढ़ती ही नहीं हुई,उल्टे दिन ब दिन उसका दाम घटता गया। इससे होनेवाले नुकसान की कल्पना करते हुए रतन से रहा नहीं गया। उसने गायों को बांधनेवाले पगहे को अपने गले में लटकाकर आत्महत्या करने का निश्चय कर लिया। जब वह इस तैयारी में था, तब पडोस के नौकर ने यह देख लिया और तुरंत पगहे को काट डाला। उसे ज़मीन पर सुला दिया और उसके चेहरे पर पानी छिड़का। आँखें खोलकर रतन ने इधर-उधर देखा और कहने लगा, ''अरे लच्छू, मैं तो इसे मामूली रस्सी समझ बैठा, यह तो कीमती पगहा है और तुमने इसके दो टुकड़े कर दिये। इसकी क़ीमत नहीं चुकाओगे तो चुप नहीं रहूँगा। तेरी ऐसी की तैसी कर दूँगा।''

-बलराम

सीताराम का नौकर

शेखर बलिपुर में रहता था। उसके दसवें साल में ही उसके माता-पिता की मृत्यु हो गयी। मामा जोगी उसे अपने घर ले गया। किन्तु उसकी पत्नी रोहिणी को उसका पालन-पोषण करना और बड़ा बनाना क़तई पसंद नहीं था। घर का सारा काम वह उसी से करवाती थी और साथ ही कोई न कोई बहाना बनाकर उसे गालियाँ देती रहती थी। शेखर, कुछ कहे बिना सब कुछ सह लेता था।

जोगी को पत्नी का यह रुख बिल्कुल पसंद नहीं आया। उसने एक दिन उसे फटकारा तो रोहिणी ने कहा, ''नाहक आप मुझ पर शक कर रहे हैं। आपके भानजे को सगे बेटे से भी ज़्यादा चाहती हूँ, उसकी देखभाल करती हूँ। चाहें तो उसी के मुँह से सुन लीजिये।''

जोगी ने कहा, ''शेखर दब्बू है। अभी उसे बुलाकर पूछूँगा तो कुछ नहीं कहेगा, क्योंकि वह तुमसे बहुत डरता है। उसकी अच्छाई को देखकर ही सही, उसके साथ अच्छा व्यवहार करना,'' जोगी ने कहा। रोहिणी नाराज़ हो उठी और कहने लगी, ''अगर सचमुच ही तुम्हारा भानजा दब्बू है, कोमल स्वभाव का है, तो उसे सीताराम के घर भेज दो। देखती हूँ, कितने दिन वह वहाँ काम करेगा।''

''जब तक मैं ज़िन्दा हूँ, अपने भानजे को किसी और के घर नहीं भेजूँगा। तुम औरत हो या डायन,'' तैश में आकर जोगी ने कहा।

शेखर दोनों के बीच हो रहे इस झगडे को देख रहा था। वह आगे आया और बोला, ''मामाजी, मैंने आपसे कभी नहीं कहा कि मामी मुझे सता रही है। इसलिए आप इसको लेकर बखेड़ा खड़ा मत कीजिये। परंतु मेरा यह फ़र्ज़ बनता है कि मैं मामी को यह साबित कर दूँ कि आपने जो भी कहा, उसमें सच्चाई है। यह साबित करने के लिए कि मैं दब्बू हूँ, स्वभाव का नरम हूँ, मुझे सीताराम

शरद जोशी

के यहाँ नौकरी करनी होगी। ऐसा करने में कोई गलती नहीं है।''

जोगी को लगा कि शेखर की स्थितिसीताराम के यहाँ ही शायद अच्छी हो, उसने यह प्रस्ताव मान लिया। यों, शेखर, सीताराम के घर पहुँचा।

अब रही सीताराम की बात। शिवपुर में वह प्रसिद्ध व्यापारी था। लोगों का यह भी कहना था कि वह अव्वल दर्जे का व्यवहार पटु है। पत्नी अरुंधति भी गुणवती है, इसलिए बेटे और बहुएँ एक ही घर में एकसाथ रहकर परिवार चला रहे हैं। यह उनकी व्यवहार दक्षता का उदाहरण भी माना जाता था। घर में हो या बाहर, कोई समस्या खड़ी हो जाती तो परिष्कार के लिए सब उसी के पास आते थे और इसमें वह गर्व महसूस करता था।

चूँकि सीताराम बूढ़ा हो गया और व्यापार की देखभाल की शक्ति उसमें नहीं रही, इसलिए बेटे ही व्यापार संभालने लगे और पिता को विश्राम देने की ठानी। किसी भी समस्या को वे पिता के पास आने देते नहीं थे। लोग जब यह जान गये, तब वे भी अपनी समस्याओं के हल के लिए उनके पास कम आने लगे।

सीताराम को शक हुआ कि सबके सब उसकी लापरवाही कर रहे हैं। बूढ़ा हो गया, जिसकी वजह से वह बात-बात पर नाराज़ हो उठता था, चिढ़ने लगता था। अरुंधति से पति का यह स्वभाव सहा नहीं गया तो उसके संरक्षण का भार अपने बच्चों के सुपुर्द कर दिया। उन जिम्मेदारियों को बेटे, बहुएँ, पोते, पोतियाँ बारी-बारी से निभाने लगे। वे उसकी देखभाल बड़ी ही सावधानी से करते थे, परंतु कोई न कोई कमी दिखाकर हर रोज़ वह उनपर नाराज़ हो उठता और बखेड़ा खड़ा कर देता था।

बहुत दिनों के बाद, बड़ी बहू का दादा नरसिंह उनके घर गया। यह सब जानकर उसे बहुत दुख हुआ। अरुंधति ने उससे सविस्तार बताया भी कि उसके पति सब के लिए कै से समस्या बन गये हैं।

सब कुछ जानने के बाद नरसिंह ने हँसते हुए कहा, ''कुछ सालों पहले मेरे सामने भी यही समस्या उत्पन्न हुई थी। तब मेरे बेटे ने मेरी देखभाल के लिए बाहर के एक आदमी को नियुक्त किया। उसके बाद हमारे घर में कोई गड़बड़ी नहीं हुई।''

नरसिंह की सलाह को अरुंधति फ़ौरन अमल

में ले आयी। परंतु सीताराम को यह प्रबंध अच्छा नहीं लगा। वह समझने लगा कि घर के लोग उससे घृणा करते हैं। इसीलिए उन्होंने बाहर के एक आदमी को उसकी देखभाल का भार सौंपा। अब नाराज़ी वह नौकरों पर उतारने लगा। इसलिए कोई भी नौकर दस दिनों से अधिक उसके यहाँ काम करता नहीं था। इस कठिन परिस्थिति में शेखर,सीताराम के घर नौकरी पर लग गया। घर में सब संतुष्ट हुए।

शेखर श्रद्धा और भक्ति के साथ सीताराम की सेवा करने लगा। किसी भी प्रकार की कमी आने नहीं देता था। किन्तु कितना भी वह करे, उसमें कोई न कोई दोष सीताराम अवश्य निकालता था। उसके जवाब में वह मुस्कुराकर चुप हो जाता था। यह देखकर सीताराम का क्रोध और बढ़ जाता था। यों तीन महीने गुज़र गये। शेखर की सहनशक्ति पर आश्चर्य प्रकट करते हुए एक दिन सीताराम ने पूछा, "मैं तुम्हें गाली दिये जा रहा हूँ। फिर भी यहाँ से चले जाने की इच्छा नहीं होती?"

शेखर ने मुस्कुराते हुए कहा, "इस घर में सब लोग अच्छे हैं। मैं यहाँ पेट भर खाता हूँ, खूब सोता भी हूँ। तिसपर आप जैसे बड़े लोग गालियाँ देंगे तो इसमें दुखी होने की क्या बात है? कहावत भी है कि बड़ों की गालियाँ आशीर्वाद होते हैं। मेरा यहाँ से चले जाने का सवाल ही नहीं उठता।"

इन बातों को सुनकर सीताराम में उसके प्रति प्रेम पैदा हो गया, पर वह किसी भी हालत में उसे

घर से भेज देने पर तुला हुआ था। एक दिन उनके घर एक साधु आया। घरवाले की भिक्षा को स्वीकार करते हुए उसने कहा, "मुझे इस घर के सब लोग अच्छे लगे। एक-एक करके बताइये कि आपको क्या - क्या चाहिये। आपकी इच्छा न्यायसंगत हो तो अवश्य पूरी करूँगा।"

सीताराम के बेटे और बहुओं ने व्यापार में वृद्धि चाही। पोते-पोतियों ने चाहा कि वे खूब पढ़े-लिखें और उच्च शिक्षा प्राप्त करें। अरुंधति ने सदा सुहागिन बने रहने की इच्छा प्रकट की। पर, सीताराम ने चाहा कि उसी का आदमी ही उसकी सेवा करे।"

साधु ने "तथास्तु" कहा।

तब सीताराम ने, शेखर को बुलाकर कहा, "इधर कुछ समय से यह मेरी सेवा में लगा हुआ

है। इसे भी अपने ही घर का सदस्य मानिये और इसकी इच्छा की भी पूर्ति कीजिये।''

सीताराम ने सोचा कि शेखर अपने उज्ज्वल भविष्य का वर माँगेगा, फिर घर से चला जायेगा और घर के लोग बारी-बारी से उसकी सेवा करते रहेंगे। परंतु सीताराम की कल्पना के विरुद्ध साधु से वर मांगा शेखर ने। उसने साधु से कहा, ''मेरे यजमान श्री सीताराम को शांति व सहनशक्ति प्रदान कीजिये और उन्हें लंबी उम्र दीजिये।''

साधु ने ''तथास्तु'' कहा और पूछा, ''तुम चाहते तो मैं तुम्हें भाग्यवान बनाता। तुम्हें इस दास्य जीवन से मुक्त कर देता। परंतु, ऐसा वर तुमने क्यों माँगा?''

''स्वामी, इस परिवार का हर सदस्य अच्छा है, इसीलिए इनकी इच्छाओं की पूर्ति की इच्छा आपमें जगी। सीताराम जिस तरह से घर के लोगों को कोसते हैं, उसी तरह से मुझे भी कोसते हैं। पर नाराज़ होने से, बात-बात पर गाली देने से उनकी तबीयत ख़राब हो जाती है । घर के लोग उनसे डरकर उनसे दूर रहने लगे हैं। अब मैं सब कुछ सह रहा हूँ, परंतु मेरी सहनशक्ति की परीक्षा का दिन भी कभी आयेगा। मैं उन्हें छोड़कर चला जाऊँ तो शायद सही नौकर उन्हें न मिले। मैं या कोई और उनकी सेवा श्रद्धापूर्वक करे, यही मेरी इच्छा है। इसीलिए उन्हें शांति और सहनशक्ति प्रदान करने की इच्छा मैंने प्रकट की।''

उसकी इन बातों को सुनकर सीताराम बहुत प्रभावित हो गया और कहा, ''मेरे बारे में जब तुम इतना सोचते हो तो तुम पराया कैसे होजाओगे? आज से तुम मेरी सेवा करोगे तो समझूँगा कि मेरे ही आदमी ने मेरी सेवा की।''

सबने सीताराम के विचार को सही मा ना। यों शेखर ने साबित कर दिया कि वह कोमल स्वभाव का है, दब्बू है। पर, वह मामाके घर नहीं गया। उसके बाद सीताराम के घर के लोगों से वह हिल-मिल गया और वह भी घर का एक सदस्य बनकर रहने लगा। यों उसने सेवा धर्म का आदर्श स्थापित किया।

उसकी सच्ची सेवा से सीताराम का स्वभाव भी मधुर और शान्त हो गया।

चन्दामामा प्रश्नावली-७

Co-sponsored by
Infosys FOUNDATION,
Bangalore

जो सही उत्तर देंगे, उनमें से एक को २५० रुपये दिये जायेंगे।*

इस प्रश्नावली में जो भी प्रश्न पूछे गये हैं, वे सबके सब जनवरी व दिसंबर २००५ के बीच में चन्दामामा के अंकों में प्रकाशित कहानियों व शीर्षकों में से लिये गये हैं, जिन्हें आप पढ़ चुके हैं। वे यदि याद हों तो इन सबके उत्तर आप तुरंत बता सकेंगे। यदि याद नहीं हों तो बारहों अंकों को सामने रख लें और पन्ने पलटें तो उन्हें आसानी से जान जायेंगे। अवश्य ही बड़ा मज़ा आयेगा।

*सही उत्तर देनेवाले एक से अगर अधिक हों तो पुरस्कार की रक़म ड्रा द्वारा निकाले गये सही उत्तर देनेवाले पाँच लोगों में समान रूप से बाँटी जायेगी।

आपको यह करना है: १. उत्तर लिखिये, २. अपना नाम और उम्र (१६ वर्ष की उम्र के अंदर होना आवश्यक है); पिनकोड सहित सही पता हो, ३. एक परिवार में सिर्फ एक ही सदस्य भाग लें, ४ अभिदाता हों तो वह संख्या लिखिये, ४. लिफ़ाफे पर **चन्दामामा प्रश्नावली**-७ लिखें और उसे चन्दामामा के पूरे पते पर हमें भेजिये, ६. अगस्त महीने के अंत तक आपकी प्रविष्टि हमें मिल जानी चाहिये, ७. अक्तूबर महीने के अंक में परिणाम प्रकाशित किये जायेंगे।

१. ६३ शिवभक्त तत्परों में एक ही महिला हैं। उनका नाम क्या है?

२. उस जातक कथा का क्या नाम है, जिसमें बताया गया है कि धर्म के प्रति श्रद्धा का होना ही उत्तम धर्म है?

३. वह कौन-सा अवयव सबसे बड़ा है, जिसे शरीर का रासायनिक कारखाना कहा जाता है?

४. हर साल सितंबर ५ को अध्यापक दिनोत्सव मनाते हैं। वह किनका जन्मदिन है?

५. १९८९ में, ५५० साल पूर्व के बरगद के एक वृक्ष को गिन्नीस बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड्स में स्थान मिला। आंध्र प्रांत के किस गाँव में यह वृक्ष है?

६. किन दो व्यक्तियों ने शिवाजी को अत्यधिक प्रभावित किया?

७. २००२ के ज्ञानपीठ पुरस्कार को पानेवाले दक्षिण भारत के सुप्रसिद्ध रचयिता कौन हैं?

८. यह चित्र किस कहानी का है?
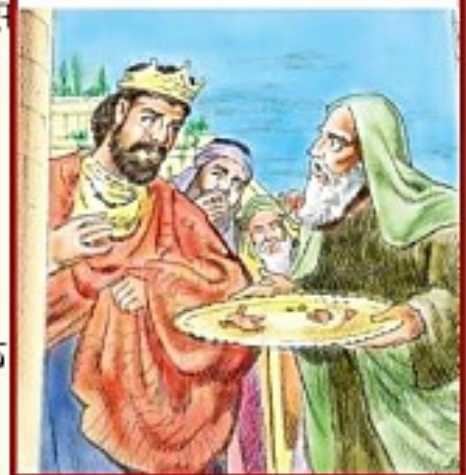
विचित्र जन्म कुंडली

कलिंग राज्य में कई महानगर थे। उन में एक दांतिपुर था। दांतिपुर नगर के राजा कलिंगु थे। उनके बड़ा कलिंगु और छोटा कलिंगु नामक दो पुत्र थे। उनकी जन्म कुंडलियों की जाँच करके ज्योतिषियों ने यों बताया, ''पिता के अनंतर ज्येष्ठ पुत्र ही राजा बनेगा, पर छोटे की जन्म कुंडली विचित्र और अपूर्व है। वह ज़िंदगी भर संन्यासी जैसा समय काटेगा, मगर वह महाराजा योगवाले एक पुत्र को जन्म देगा।''

कुछ साल बाद राजा कलिंगु का स्वर्गवास हो गया। इस पर ज्येष्ठ पुत्र का राज्याभिषेक हुआ। छोटे को राज प्रतिनिधि का पद मिला। लेकिन उसके मन में ज्योतिषियों की यह बात अच्छी तरह से घर कर गई कि उसका होनेवाला पुत्र महाराजा बनेगा। इसके बल पर वह अपने बड़े भाई के आदेशों का पालन किये बिना स्वेच्छा पूर्वक व्यवहार करने लगा। इस कारण दोनों भाइयों के बीच मनमुटाव पैदा हो गया। बड़े भाई ने छोटे को बन्दी बनाने का आदेश दिया।

उन्हीं दिनों में बोधिसत्व कलिंग राज्य के मंत्रियों में से एक थे। बड़े कलिंगु के शासन काल तक वे काफी बूढ़े हो चले थे। राज परिवार का हित चाहनेवाले उस वृद्ध मंत्री ने गुप्त रूप से छोटे कलिंगु को राजा का आदेश सुनाया। छोटे को यह बात अपमानजनक मालूम हुई। उसने कहा, ''महानुभाव, आप सब प्रकार से मेरे हितैषी हैं। आपने ज्योतिषियों की बातें सुनी हैं। अगर वे बातें सच साबित हो सकती हैं तो मेरी कामना की पूर्ति करने की जिम्मेदारी आप पर है। लीजिये- मेरी नामांकित अंगूठी, मेरी शाल और मेरी तलवार। ये तीनों जो व्यक्ति लाकर मेरी निशानी के रूप में आप को दिखायेगा, समझ लीजिये, वही मेरा पुत्र है। आप जो भी उसकी मददकर सकते हैं, जरूर कीजियेगा।'' यों निवेदन कर किसी को बताये

बिना वह जंगलों में भाग गया।

उन्हीं दिनों कई साल बाद मगध राजा के एक पुत्री हुई। उसकी जन्म कुंडली देख ज्योतिषियों ने बताया, ''इसकी जन्म कुंडली विचित्र है। यह संन्यासिनी जैसी ज़िंदगी बितायेगी, मगर इसके महाराजा योगवाला पुत्र पैदा होगा।''

यह ख़बर मिलते ही सभी सामंत राजा राज कुमारी के साथ विवाह करने के लिए होड़ लगाने लगे। यह राजा के लिए समस्या बन गई। उनमें से किसी एक के साथ राजकुमारी का विवाह करें तो बाक़ी लोग शत्रु बन जायेंगे। इसलिए लाचार होकर एक दिन राजा अपनी पत्नी और पुत्री को लेकर गुप्त रूप से जंगलों में भाग गये और गंगा नदी के किनारे कुटी बना कर उस में तीनों सादा जीवन बिताने लगे। उस कुटी से थोड़ी दूर कलिंग राजकुमार की कुटी थी।

एक दिन अपनी पुत्री को कुटी में छोड़ मगध राज दंपति कंद-मूल और फल लाने चले गये। उस समय राजकुमारी ने तरह-तरह के फूल तोड़ कर एक सुंदर माला बनाई।

कुटी के पास नदी के किनारे आम का एक बहुत बड़ा पेड़ था। मगध राजकुमारी उस पेड़ की डालों में बैठ गई। वहाँ से फूलों की माला पानी में फेंक दी और तमाशा देखने लगी।

वह फूल माला बहती हुई स्नान करने वाले छोटे कलिंगु के सर से जा लगी। माला हाथ में लेकर छोटे कलिंगु अपने मन में सोचने लगा, 'ओह, यह कैसी सुंदर फूल माला है। इसमें कितने प्रकार के फूल हैं। इसे कितनी सुंदर बनाई है किसी युवती ने। वह जरूर कोई अपूर्व सुंदरी होगी। इस भयंकर जंगल में वह सुंदरी क्यों आई होगी?' यों अनेक प्रकार से सोच विचार कर आख़िर वह छोटा कलिंगु उस सुंदरी की खोज करने के लिए उसी वक़्त चल पड़ा।
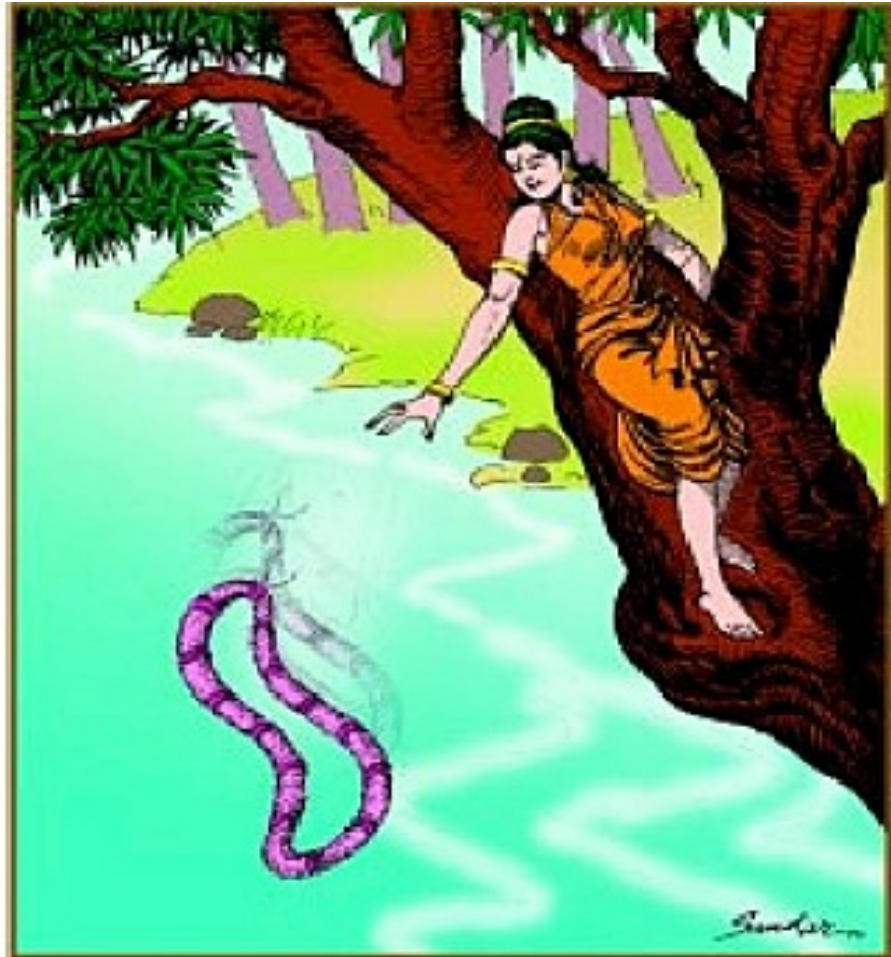
वह जंगल में चला जा रहा था। उसे एक दिशा में मधुर कंठ स्वर सुनाई दिया। उसने रुक कर इधर-उधर अपनी नज़र दौड़ाई। आम की डालों पर बैठे गीत गाने वाली वह सुंदरी राजकुमार छोटे कलिंगु को दिखाई दी।

कलिंगु ने कुशल प्रश्नों के साथ उससे वार्तालाप करना शुरू किया। अंत में उसे अपनी पत्नी बनाने की इच्छा प्रकट की। इस पर युवती ने कहा, ''आप तो किसी मुनि परिवार के लगते

हैं, पर हम लोग क्षत्रिय हैं। ऐसी हालत में हमारा विवाह कैसे संभव हो सकता है?''

इसके जवाब में कलिंगु ने अपनी सारी कहानी आदि से लेकर अंत तक सुनाई। इस पर राजकुमारी ने अपने परिवार का सारा रहस्य खोल दिया। इसके बाद वे दोनों राजकुमारी के पिता के पास पहुँचे। राजा ने सारा बृत्तांत जान कर अपने मन में सोचा 'राजकुमारी के योग्य वर यही है।' इसके बाद छोटे कलिंगु तथा मगध राजकुमारी का बिवाह हुआ।

एक साल बाद उनके एक पुत्र पैदा हुआ। राज लक्षणों से सुशोभित उस शिशु का नामकरण विजय कलिंगु किया गया। बड़े ही लाड़-प्यार से उसका पालन-पोषण होने लगा।

थोड़े समय बाद एक दिन कलिंगु ने जन्म कुंडलियाँ निकाल कर हिसाब किया। पता चला कि बड़े कलिंगु की आयु अब तक समाप्त हो गई होगी।

इस पर छोटे कलिंगु ने अपने पुत्र विजय कलिंगु को बुलाकर समझाया, ''बेटा, तुम्हें तो अपना जीवन इन जंगलों में बिताना नहीं है। मेरे बड़े भाई बड़े कलिंगु दांतिपुर के राजा हैं। तुम उस राज्य के वारिस हो। इसलिए तुम शीघ्र जाकर उनके उत्तराधिकारी के रूप में सिंहासन पर विराजमान हो जाओ।'' यों समझाकर उसने वृद्ध मंत्री का वृत्तांत सुनाया और निशान के रूप में वे तीन चीजें सौंपकर आशीर्वाद देकर भेज दिया।

अपने माता-पिता तथा नाना-नानी से अनुमति लेकर विजय कलिंगु दांतिपुर पहुँचा। वृद्ध मंत्री के दर्शन करके अपना परिचय दिया।

तब तक छोटे कलिंगु के अंदाज के अनुसार बड़े कलिंगु का देहांत हो चुका था। दांतिपुर में अराजकता फैल गई थी।

वृद्ध मंत्री ने एक महा सभा की और छोटे विजय कलिंगु का जन्म वृत्तांत सब को सुनाया। सभा सदों ने आश्चर्य में आकर जयकार किये और नये राजा का स्वागत किया।

इसके बाद राजसिंहासन पर बैठकर विजय कलिंगु ने वृद्ध मंत्री की सलाह से राज्य किया और अपने पूर्वजों की प्रतिष्ठा क़ायम रखी।

रामायण

पिता को उस स्थिति में देखकर राम भयभीत हो उठे। उन्होंने घबराकर कैकेयी से पूछा, "क्या मुझ से कोई गलती हो गई है? पिताजी का इस प्रकार चिन्तित होने का क्या कारण है? मैंने उन्हें कभी इस हालत में नहीं देखा है?"

कैकेयी ने बिना हिचकिचाये कहा, "राजा को गुस्सा नहीं है। उनकी एक इच्छा है, वह तुम्हें बताने में संकोच कर रहे हैं। कभी उन्होंने मुझे एक बर देने का वचन दिया था। शायद अब पछता रहे हैं क्यों तब वचन दिया था। पर वचन का निभाना धर्म है। पिता के बचन निभाने का भार तुम पर है। बात अच्छी हो या बुरी, यदि तुमने उसे पूरा करने का वचन दिया तो मैं बताऊँगी। वे अपने मुख से यह न कह सकेंगे। इसलिए मुझे ही कहना होगा।"

"यह क्या है माँ? क्या आप मुझपर सन्देह करती हैं? अगर पिताजी चाहें, तो क्या मैं आग में न कूदूँगा? उनकी क्या इच्छा है, बताइये, जरूर पूरा करूँगा।"

कैकेयी ने राम से देव और असुरों के युद्ध के बारे में कहा। उसने बताया कि उस युद्ध में देवों की ओर से लड़ते समय दशरथ की उसने कैसे सहायता की थी और कैसे दशरथ ने उस समय उसे वर दिया था। "उस वर के अनुसार राम को चौदह साल वनवास करना होगा। ये पट्टाभिषेक की तैयारियाँ व्यर्थ नहीं जायेंगी। भरत का पट्टाभिषेक होगा, और भूमि की चारों दिशाओं में उसका राज्य होगा। यदि तुम वल्कल वस्त्र पहनकर, बाल बढ़ाकर, बन में रहे तो तुम्हारे पिता पर यह आरोप नहीं लगाया जायेगा कि वे वचन
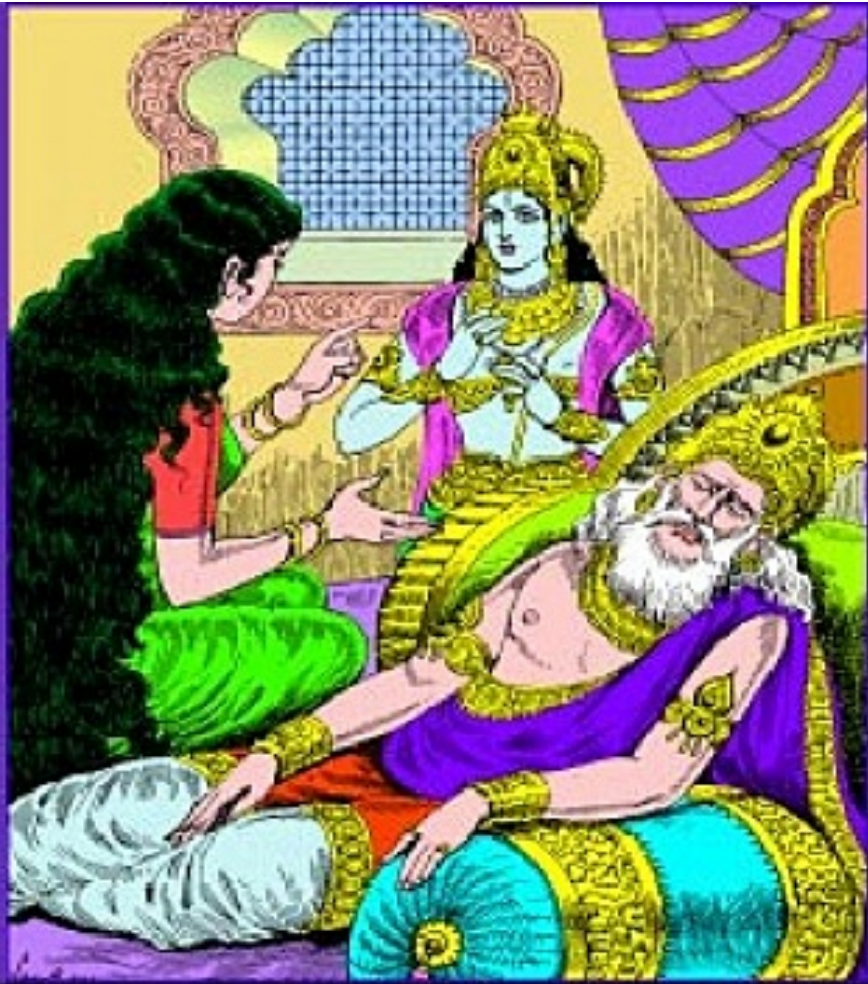
देकर मुकर गये थे।'' कैकेयी ने बड़े ही निर्मम स्वर में राम को ये बचन सुनाये।

इतनी कठोर बात और जिस कठोर ढँग से वह कही गई थी, और कोई सुनता तो इतना उन्मत्त-सा हो जाता, क्रुद्ध होता कि कैकेयी का मुँह भी शायद न देखता। परन्तु राम ने क्षण भर के लिए भी विचलित हुए बिना शान्त भाव से कहा, ''माँ, तो ऐसा ही होगा। मैं बल्कल वस्त्र पहनकर बन में जाऊँगा। भरत के लिए तुरंत खबर भिजवाइये। जब पिता की यह प्रतिज्ञा है और तुम्हारी इच्छा है, तो क्या मैं भरत को राज्य नहीं दूँगा? मुझे तो बस यही कष्ट है कि पिताजी ने मुझ से यह क्यों नहीं कहा कि वे भरत का पट्टाभिषेक करवाना चाहते हैं।''

यह सुन कैकेयी ने सन्तुष्ट होकर कहा, ''और कुछ नहीं, शायद वे इसी द्विविधा में रहे कि तुम उनकी इच्छा पूरी करोगे कि नहीं, इसीलिए तुम्हें इस विषय में कुछ नहीं कहा। भरत को बुलबाऊँगी। परन्तु तुम बिना देरी किये बन चले जाओ। जब तक चले न जाओगे, तब तक तुम्हारे पिता स्नान या भोजन आदि नहीं करेंगे।''

कैकेयी की ये बातें दशरथ के हृदय में असंख्य बाणों की तरह चुभ गईं। वे इस बेदना को सह न सके और मूर्छित हो गये। राम ने उन्हें उठाकर कैकेयी से कहा, ''माँ, मुझमें राज्यांकाक्षा या धनाकांक्षा नहीं हैं। यदि मुझे कुछ और करना हो तो बताओ। मैं आपकी तथा पिता की इच्छा पूर्ति के लिए अपनी सामर्थ्य भर कुछ भी करने को तैयार हूँ। उसके लिए अपने प्राण तक देने को तैयार हूँ। जो वर तुमने राजा से माँगे हैं, वे तो बहुत छोटे हैं।''

दशरथ यकायक बिलख-बिलखकर रोने लगे और फिर मूर्छित हो गिर गये। राम ने पिता और कैकेयी की प्रदक्षिणा की, उनको नमस्कार किया। फिर वे अन्तःपुर से बाहर चले गये। अपने मित्रों की ओर देखा। पट्टाभिषेक की बेदिका की प्रदक्षिणा करके निकल पड़े। लक्ष्मण अत्यन्त दुख और क्रोध के साथ भाई के पीछे-पीछे चले।

राम रथ पर सबार नहीं हुए। छत्र और चामरों का उपयोग उन्होंने निषिद्ध कर दिया। उन्होंने अपनी ऐसी मनःस्थिति कर ली, जो उन योगियों की होती है, जो सर्वस्व त्याग चुके होते हैं। दुःख को दबाकर वे अपनी माता कौशल्या से यह कहने

निकले। दशरथ के अन्त:पुर की स्त्रियाँ जोर-जोर से रोने लगीं।

राम-लक्ष्मण जब कौशल्या के महल में गये तब, यह कोई न जानता था कि क्या होने जा रहा है।

राम जब पहले प्राकार के द्वार से अन्दर जा रहे थे, तब वहाँ एक बूढ़े और कई लोगों ने उठकर विजय ध्वनियों से उनका स्वागत किया। दूसरे प्राकार के वृद्ध ब्राह्मण को नमस्कार करके वे तीसरे प्राकार में गये। वहाँ सब स्त्रियाँ ही थीं। उनमें से कुछ कौशल्या से राम-लक्ष्मण के आगमन के बारे में कहने गईं। बाकी ने जय निनाद किया, ''महाराजा की जय हो।''

जब राम पहुँचे तो कौशल्या हवन कर रही थीं। उन्होंने राम का आलिंगन किया।

राम को यह सूझ नहीं रहा था कि माता को कैसे वह दुखद वार्ता सुनाये। ''माँ, शायद तुम नहीं जानती हो? सब कुछ उलट-पलट गया है। मैं चौदह बर्ष कन्द, फल, बगैरह खाता, दण्डकारण्य में काटने जा रहा हूँ। मैं सिंहासन पर नहीं बैठने जा रहा हूँ। मैं दूर्बासन पर बैठने जा रहा हूँ। पिता जी भरत का पट्टाभिषेक करने जा रहे है।''

यह सुन कौशल्या भूमि पर गिर पडीं और छटपटाने लगीं। राम ने उन्हें उठाया। कौशल्या ने राम से कहा, ''शायद मेरे जीवन में सुख नहीं है। तुम्हें जन्म देकर इन कष्टों के सहने की अपेक्षा यदि मैं बाँझ ही रहती, तो एक ही चिन्ता रहती कि बच्चे नहीं हैं। मैं कभी सुखी न हुई। सोचा था कि तुम राजा बनोगे, तो कुछ सुख मिलेगा। होने को तो मैं राजा की पत्नी हूँ, पर सौतों ने मुझे क्या -क्या कहकर नहीं सताया। क्योंकि मेरे पति को मेरी परवाह नहीं है, मुझे स्वतन्त्रता नहीं है। अब मेरा जीवन कैकेयी की नौकरानियोंसे भी अधिक हीन हो जायेगा। पिछले पन्द्रह साल मैंने इसी आशा में काट दिये कि तुम कब राजा बनोगे। अब वह आशा भी मिट्टी में मिल गई है। अच्छा है मैं मर जाऊँ। पर मौत बुलाने पर नहीं आती। बेटा, मैं भी तुम्हारे साथ आऊँगी।''

कौशल्या की बातें सुनते-सुनते लक्ष्मण को एक बात सूझी, ''माँ, उस कैकेयी की बात सुनकर, भाई के जंगल जाने में मुझे कोई नई बात नहीं दिखाई दी। राजा वृद्ध हैं। उनका मन दुर्बल

है। यदि वे अन्यायपूर्ण कार्य करते हैं, तो कहाँ लिखा है कि हम भी अन्यायपूर्ण कार्य करें?''

फिर उन्होंने राम से कहा, ''भाई, इससे पहले कि लोगों को पता चले कि राजा ने तुम्हें वनवास की आज्ञा दी है, हम अपने बल और शौर्य से राज्य को अपने वश में कर लेंगे। मैं बाण से सब विरोधियों को मार दूँगा। हमारे पिता ही हमारा विरोध कर रहे हैं। हम सब में तुम बड़े हो। यह राज्य तुम्हारा है। तुमने क्या गलती की है कि तुम्हें जंगलों में भेजा जा रहा है? यह रहा मेरा धनुष-बाण, मैं युद्ध के लिए सन्नद्ध हूँ।''

कौशल्या ने राम से कहा, ''बेटा, जैसा लक्ष्मण कह रहा है, वैसा करो। क्या आवश्यक है कि तुम अपने पिता की बात सुनो? क्या मैं तुम्हारी माँ नहीं हूँ? मैं नहीं चाहती कि तुम जंगल जाओ। यदि तुम गये तो मैं उपवास करके प्राण छोड़ दूँगी। इसका पाप तुम पर लगेगा।''

राम विचित्र परिस्थिति में उलझ गये थे। यद्यपि उनकी कोई व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा नहीं थी, फिर भी माता-पिता दोनों को एक साथ सन्तुष्ट करना उनके लिए कठिन लग रहा था। पिता की पीड़ा के साथ-साथ वे अपनी माता कौशल्या की व्यथा का भी अनुभव कर रहे थे। लेकिन उनके सामने उनका धर्म स्पष्ट दिखाई पड़ रहा था।

राम ने माँ से कहा, ''मैं पिताजी की आज्ञा का धिक्करण नहीं कर सकता। पिता की आज्ञा पर कितनों ने ही कितने ही घोर पाप किये हैं। कंड नामक मुनिने गोवध किया। परशुराम ने माता की ही हत्या कर दी। सगर के साधारण पुत्र पिता की आज्ञा पर पाताल में गये और साठ हज़ार आदमी एक साथ मर गये। माँ, क्या मैं तुम्हारी परवाह किये बगैर वन में जा रहा हूँ? कैकेयी भी तो मेरी माँ हैं। क्या वह मुझे भरत से कम प्यार करती हैं? यदि उनकी यही इच्छा है तो मेरा क्या कर्त्तव्य होना चाहिये? यदि मेरे वनवास से पिता का वचन और माता की इच्छा पूरी होती हो तो यही मेरा कर्त्तव्य है। इसलिए खुशी से मुझे वनवास के लिए विदा करो।''

फिर लक्ष्मण से कहा, ''लक्ष्मण, क्या मैं तुम्हारा प्रेम और पौरुष नहीं जानता हूँ? किन्तु सर्वोच्च स्थान धर्म का है। कर्त्तव्य का है । हमें उसे निभाना है। इसलिए तुम भी मेरी तरह सोचो।''

माँ को आश्वासित करने के लिए रामने कितने ही धर्म बताये। उसने कहा कि उसके लिए यह ठीक नहीं है कि वृद्ध पति को छोड़कर उसके साथ आये। उन्होंने लक्ष्मण से कहा, ''यह दैव निर्णय है। नहीं तो वह कैकेयी, जो मुझे इतना चाहती थीं, वन में जाने की आज्ञा कैसे देतीं? तुम्हें यह जानकर कितना दुःख हुआ कि पट्टाभिषेक रोक दिया गया है। उसी तरहअनुमान करो उनको यह जानकर कितनादुःख हुआ होगा कि मेरा पट्टाभिषेक होने जा रहा है। मुझे याद नहीं कि मैंने कभी पिताजी का दिल दुखाया है। अब भी मैं उनके कष्ट नहीं देख सकता और उनकी इच्छा की पूर्ति के लिए सर्वस्व त्यागने को तैयार हूँ।''

यह जानकर कि राम ने पिता की आज्ञा का पालन करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है, कौशल्या ने उसके कल्याण के लिए ब्राह्मणों से हवन करवाया और उसे आशीर्वाद देकर भेज दिया।

राम सीता के अन्तःपुर में गये। सीता को देखते ही उनके आँसू न रुके। पति को, जिनके मुँह पर पट्टाभिषेक का उत्साह तो अलग, आँसू बहाता देख सीता भी घबराईं। उन्होंने उनसे पूछा, ''पट्टाभिषेक के शुभ मुहूर्त में आपकी आँखों में आँसू? क्या बात है, स्वामी?''

जो कुछ हुआ था, उसे सुनाकर राम ने उससे कहा, ''जब तक मैं वन से वापस न आऊँ, तब तक जैसा भरत कहे, वैसा करो। उसके सामने कभी मेरी प्रशंसा न करना। सिवाय बन्धुत्व के

भरत के पास तुम्हारा पोषण करने का और कोई कारण नहीं है। इसलिए तुम उसे सन्तुष्ट रखना। मेरे वृद्ध माता पिता की भी सेवा करना।''

यह सुन सीता ने प्रेम और क्रोध के सम्मिलित स्वर में पूछा, ''ये क्या बातें हैं, आपने मुझे समझा क्या है कि आप मेरा अपमान कर रहे हैं। स्त्री के लिए पति ही तो सब कुछ है। यदि आपको वनवास दिया गया है तो क्या मुझे नहीं दिया गया है? यदि आपको जंगल में चलना ही है तो क्या आपके आगे कांटों को तोड़कर मैं रास्ता नहीं बना सकती? जब आप जैसे पराक्रमी मेरे साथ होंगे, तो मुझे जंगल में किसी चीज़ का भय नहीं है। जो जंगल में रहनेवालों की रक्षा कर सकता है, क्या मेरी रक्षा नहीं कर सकता? मैं जंगल में नहीं कहूँगी कि मुझे यह चाहिए या वह चाहिए। आप कितना भी कहें, पर मेरा इरादा बदलनेवाला नहीं है।''

राम बिल्कुल नहीं चाहते थे कि सीता उनके साथ जंगल में आये और अनेक प्रकार के कष्ट झेले। उन्होंने जंगलों के कष्टों के बारे में विस्तारपूर्वक बताया, पर सीता ने उनकी परवाह नहीं की। ''आपको देखकर ज्योतिषियों ने जैसे लिखा था कि आपके जीवन में वनवास है, वैसे मुझे भी ज्योतिषियों ने बताया था कि मेरे जीवन में भी वनवास है। इसलिए मैं आपके साथ वनवास अवश्य जाऊँगी।''

तब भी राम उनको साथ ले जाने के लिए नहीं माने। सीता बड़ी दुखी और क्रुद्ध हुईं। उन्होंने राम से कहा, ''मैंने क्या गलती की है कि मुझे छोड़कर जाने की सोच रहे हैं? मेरा आपके सिवाय कोई नहीं है। आपको छोड़कर क्या मैं वंश पर कलंक लगाऊँ? आप जहाँ हैं, वहीं मेरे लिए स्वर्ग है।'' वे यह कहकर रोने लगीं।

राम ने उनके दोनों हाथ लेकर सहलाया, फिर वचन दिया कि वे उनको साथ ले जायेंगे। ''वनवास के लिए तैयार हो जाओ, जो कुछ तुम्हारे पास है, दान कर दो। जो साज-सामान है, पहले सेवकों को दे दो, जो बचे ब्राह्मणों को दे दो। संन्यासियों को भोजन दो। भिक्षुकों को दान दो।'' सीता खुशी से सब करने लगी।

बच्चों में भगवान

एक जमाने में विदर्भ देश में महेन्द्र नामक एक नामी जादूगर था। उसने राजाओं- महाराजाओं को प्रसन्न कर अनेक उपाधियाँ प्राप्त कीं और अपार धनार्जन भी किया। लेकिन वह बड़ा दानी था, इसलिए उसकी कमाई का अधिकांश भाग उसके हाथों ही ख़र्च हो गया।

महेन्द्र का पुत्र जितेन्द्र जादूगरी विद्या में अपने पिता से अधिक प्रवीण था। मगर उसके जमाने में जादूगरी के प्रति आदर घटगया था। आमदनी कम हो जाने पर भी जितेन्द्र अपने पिता जैसे दान देकर निर्धन बन गया।

जितेन्द्र के दो पुत्र थे। उसने अपने दोनों पुत्रों को जादूगरी सिखाई। जितेन्द्र ने इस विचार से यह विद्या अपने पुत्रों को सिखाई कि एक तो वह उनका पेशा है और दूसरी बात यह है कि फिर से शायद जादूगरी की लोकप्रियता बढ़ जाये।

जितेन्द्र का बड़ा पुत्र रामभद्र हद से ज़्यादा धन ख़र्च करता था। बचपन में उसे अपने पिता से सदा बिना माँगे धन मिला करता था। मगर हालत के बदल जाने के कारण उसके माँगने पर पिता जब धन न देते तो वह घर में ही चोरी करने लग गया। यह बात मालूम होने पर जितेन्द्र ने गुस्से में आकर रामभद्र को पीटा। रामभद्र रूठकर घर से चला गया और फिर लौटकर कभी नहीं आया।

क्रोध में जितेन्द्र ने रामभद्र को पीटा था मगर वह उसको अपने प्राणों से ज़्यादा प्यार करता था। उसके भाग जाने पर उसके माता-पिता उसी की चिंता में बीमार पड़े और कुछ ही दिनों में मर गये। तब जितेन्द्र का दूसरा पुत्र लक्ष्मीचन्द अकेला रह गया।

लक्ष्मीचन्द दृढ़ चित्तवाला था। वह गाँवों में घूमते, गलियों में जादू दिखाते, थोड़ी-बहुत कमाई से संतुष्ट होकर दिन बिताने लगा।

एक दिन लक्ष्मीचन्द एक गली में अपने जादू का प्रदर्शन कर रहा था। उसे देखने कई बच्चे वहाँ पर जमा हुए। लक्ष्मीचन्द यह जानता था कि उन बच्चों के द्वारा उसे ज़्यादा पैसे मिलनेवाले नहीं हैं। फिर भी अपना जादू उन्हें दिखाकर सबको प्रसन्न चित्त बना रहा था।

इतने में बगल के घर से एक लड़के के दहाड़ मारकर रोने की आवाज़ सुनाई दी। लक्ष्मीचन्द ने अपने जादू का प्रदर्शन रोक दिया और उस घर में पहुँच कर देखा कि एक गृहिणी अपने चार साल के लड़के को बुरी तरह से पीट रही है।

लक्ष्मीचन्द के कारण पूछने पर उस गृहिणी ने बताया कि उस लड़के का पिता हाल में बीमार पड़ गया था। उस गृहिणी ने भगवान से मनौती की थी कि यदि उसके पति की बीमारी दूर हो जाएगी तो घर भर के लोग एक सप्ताह दुपहर तक उपवास करके भगवान के दर्शन कर तब भोजन करेंगे। भगवान की कृपा से बीमारी ठीक हो गई। जैसे-तैसे छे दिन बीत गये। आज लड़के को दुपहर तक खाना खिलाये बिना रोकना मुश्किल हो गया। वह लड़का भूख के मारे रो रहा है। उस गृहिणी को भगवान के दर्शन करने के लिए जाना था। समझाने-बुझाने पर भी वह मानता न था, इसलिए उसे पीट रही है।

लक्ष्मीचन्द को लगा कि लड़के को भूखा रखने के साथ पीटना भी कितना अन्याय है। उसने उस गृहिणी से कहा, ''माई! लोग कहते हैं कि बच्चों में भगवान निवास करते हैं। मेरी समझ में नहीं आता कि यदि आप इस बच्चे में भगवान को नहीं देख पातीं तो किस भगवान को देखने आप जा रही हैं?''

इस पर उस गृहिणी ने ख़ीझकर कहा, ''इसीलिए तुम्हारी ज़िंदगी ऐसी हो गई है! यदि तुम्हें इसके भीतर सचमुच भगवान दिखाई देते हैं तो इसको संभाल लो। मैं भगवान के दर्शन करके लौटूँगी, तब तुम्हें भी खाना खिलाऊँगी।''

लक्ष्मीचन्द ने मान लिया, मीठी बातों तथा जादू के खेल दिखाकर उस बच्चे को भुलावे में रखा। गृहिणी ने लौटकर लक्ष्मीचन्द की तारीफ़ की और उसको भी खाना खिलाया।

खाने के बाद लक्ष्मीचन्द ने उस गृहिणी से कहा, ''माई! अपने पुत्र से भी ज़्यादा जिन्हें मानती हैं, वे आप के भगवान कहाँ पर हैं? उन्हें देखने की मेरी भी बड़ी इच्छा है।''

गृहिणी ने हँसकर कहा, ''भगवान का मतलब क्या तुम साधारण भगवान को समझते हो? वह तो प्रत्यक्ष देवता है! तुमसे बात करेगा। सवालों का जवाब देगा। तुम पर स्नेह बरसा कर तुम्हारी तक़लीफ़ों को दूर करेगा।''

लक्ष्मीचन्द का कुतूहल और बढ़ गया। वह उस जगह गया जहाँ पर भगवान के सशरीर विराजमान होने की बात गृहिणी ने बताई। वहाँ पर बड़ी भीड़ जमा थी। सब लोग मौन बैठे थे। एक ऊँचे आसन पर दाढ़ी और मूँछवाले एक साधु बैठा हुआ था। वह जनता को उपदेश दे रहा था कि सच्चे मार्ग पर चलो। जो लोग विपत्तियों में थे, उन्हें अपने निकट बुलाकर समझा रहा था कि उसने जनता के दुखों को दूर करने के लिए ही यह अवतार लिया है। बीच-बीच वह व्यक्ति हवा में ही भभूत की सृष्टि करके लोगों पर छिड़क रहा था। जब-तब हवा में उड़कर थोड़े क्षण वैसे ही रहता था। इस पर भक्त उच्च स्वर में पुकार रहे थे, ''हे परमात्मा! हमारा उद्धार करो।''

लक्ष्मीचन्द को यह सब विचित्र-सा प्रतीत हुआ। साधु ने जो विद्याएँ प्रदर्शित कीं, वे सब वह भी जानता था। मगर वह एक साधारण जादूगर ही रह गया और यह साधु भगवान बन बैठा है। इस रहस्य का पता लगाने के लिए लक्ष्मीचन्द अर्द्ध रात्रि को एकांत में उस साधु से मिला।

''तुम कौन हो?'' साधु ने लक्ष्मीचन्द से पूछा।
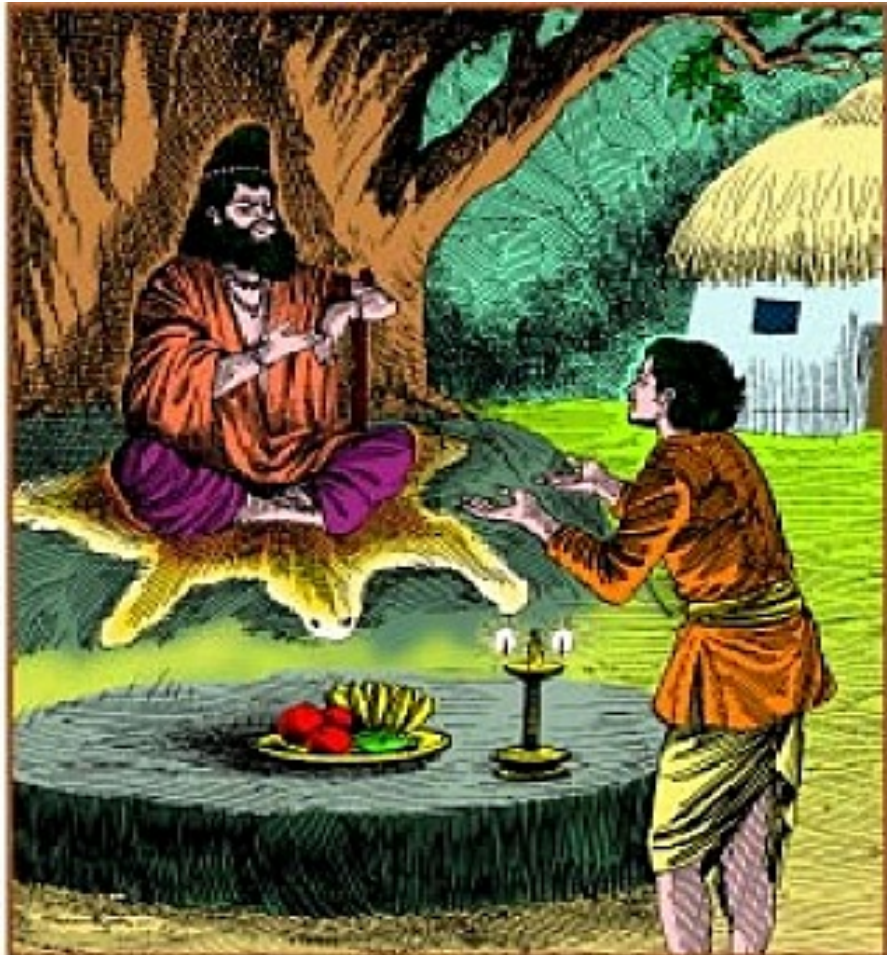
''मैं एक जादूगर हूँ। मैंने आपके प्रदर्शन देखे हैं। उन्हें देख लोग महिमा मान रहे हैं। उन्हीं प्रदर्शनों को करते रहने पर भी मुझे भर पेट खाना मिलना मुश्किल प्रतीत हो रहा है। लोग आप को भगवान बता रहे हैं। उसी रहस्य का पता लगाने आया हूँ।'' लक्ष्मीचन्द ने कहा। उसने उस दिन का अपना अनुभव भी साधु को बताया।

''इसमें रहस्य की कोई बात नहीं है कि मैं भगवान का अवतार हूँ! मुझे सहज रूप में जो शक्तियाँ प्राप्त हैं, उन्हें तुमने परिश्रम करके एक विद्या के रूप में सीख लिया है। तुम्हारे प्रदर्शन के लिए उपकरणों की आवश्यकता है। मेरे लिए उनकी ज़रूरत नहीं।'' साधु ने जवाब दिया।

''ऐसी बात है! तब तो मैं अपनी उंगली काट लेता हूँ। क्या उसको आप फिर से चिपकासकते हैं?'' लक्ष्मीचन्द ने पूछा।

"हाँ, ज़रूर कर सकता हूँ, क्यों नहीं?" साधु ने जवाब दिया। झट लक्ष्मीचन्द ने चाकू से अपनी उंगली काट डाली। इस पर साधु ने कटी उंगली को यथा स्थान रखकर मंत्र पढ़ा। ख़ून बहना बंद हो गया और उंगली पहले जैसे हो गई।

"यह तो असंभव है! यह विद्या मेरे परिवारवालों को छोड़ कोई नहीं जानता।" लक्ष्मीचन्द ने कहा।

साधु ने चौंककर पूछा, "तुम्हारा नाम लक्ष्मीचन्द है न!"

"जी हाँ, लेकिन आप कैसे जानते हैं?"।

"मैं तुम्हारा बड़ा भाई रामभद्र हूँ!" साधु ने लक्ष्मीचन्द की ओर स्नेह भरी दृष्टि से देखकर कहा। लक्ष्मीचन्द चकित रह गया।

साधु ने लक्ष्मीचन्द से यों कहा, "मैं तुम्हारे सवाल का अब सही जवाब देता हूँ। तुमने एक छोटे बालक को अपने जादू के द्वारा भूख की याद भुला दी। वह बालक तुम में भगवान को देखता है। मगर बड़ों के बारे में ऐसी बात नहीं। मैंने अपने को भगवान बताकर जादू किया और भगवान बन बैठा। तुमने अपने को जादूगर बताकर जादू किया तो तुम केवल जादूगर ही रह गये। लोग मेरे और तुम्हारे जादू को भी देख रहे हैं। मगर उनमें संदेह पैदा नहीं होता। इस दुनिया में आराम से जीना है तो केवल विद्या पर्याप्त नहीं है। दूसरों को मीठी बातें सुनाकर उन्हें धोखा देना भी सीख जाओगे तभी तुम्हारी विद्या लोकप्रिय होगी। अपने को भगवान बता कर झूठ बोलना ही मेरी जीविका का आधार है। जब तक जनता मूर्ख बनी रहेगी, तब तक मेरे लिए किसी बात की कमी न होगी। अब तुम्हारा संदेह दूर हो गया है न? अब जा सकते हो।"

लक्ष्मीचन्द वहाँ से चला गया। इसके बाद उसका क्या हुआ, किसी को पता न चला। लेकिन यह समाचार जंगल की आग की तरह सर्वत्र फैल गया कि विदर्भ देश की पूर्वी दिशा के एक छोटे से गाँव में भगवान ने अवतार लिया है। वह अनेक महिमाएँ प्रदर्शित कर रहा है और लोग दल बांधकर उसे देखने जा रहे हैं।
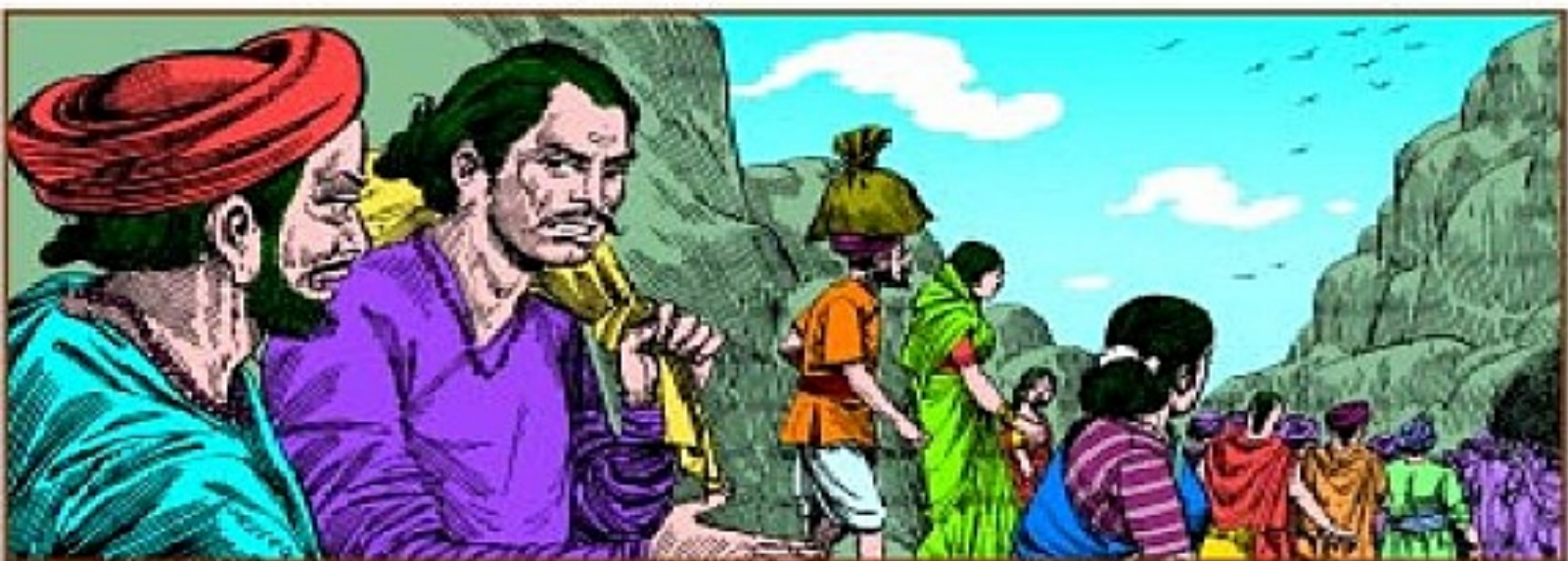
7
चित्रः गाँधी अय्या
अपराजेय गरुड़
रामसिंह चन्द्रपुरी की सरहद से युवकों के लापता होने की घबरा देनेवाली खबर लाता है। नरेन्द्रदेव रवीन्द्रदेव और आम पुरुष को बताता है कि उसने अपने पुराने मित्र बज्रपुरी के विक्रमसिंह को गुफा में उससे मिलने के लिए लिखा है। प्रधान मंत्री पुष्पराज नरेन्द्रदेव से मिलने जाता है।

रवीन्द्रदेव बज्रपुरी के प्रधान मंत्री से मिलता है।
वह यहाँ अपने राजा का दूत बनकर आया है।
विक्रमसिंह को तुम्हारे पिता का सन्देश मिल गया है। उन्होंने मुझे राज्याभिषेक के लिए चन्द्रपुरी जाने से पहले यहाँ भेजा है।
हमें प्रसन्नता है कि आप आये। इससे भी अधिक, यह मेरे पिता के लिए सम्मान की बात है, किन्तु...

....हमें दुख है कि हमें आप का स्वागत इस पर्वत गुफा में करना पड़ रहा है, अपने महल में नहीं।

पुत्र, तुम्हें ऐसा लगता होगा, लेकिन मुझे विश्वास है कि शीघ्र ही परिवर्तन होंगे।
हम लोगों को नहीं मालूम चन्द्रपुरी में क्या हुआ था। मेरे राजा निश्चित रूप से आप की मदद करेंगे।

मैंने अन्तर्दृष्टि से देखा है; विक्रमसिंह पड़ोसी राज्यों को जीत लेगा और सम्राट बन जायेगा। रवीन्द्र, मेरी सलाह है कि तुम उसे पहले चन्द्रपुरी हड़पने में मदद करो।

परिवर्तन अवश्यम्भावी है। क्या आप यह नहीं कह रहे थे कि आप को अपनी शारीरिक बनावट में भी परिवर्तन की आशा थी। वापस जाकर मैं अपने राजा से बात करूँगा।
निस्सन्देह, वे हमारी मदद करेंगे।
हम आप को छोड़ आते हैं, महानुभाव।

चन्द्रपुरी में, आदित्य और अरुणा के विवाह की तैयारियाँ हो रही हैं, इसके बाद आदित्य का राज्याभिषेक होगा। अतिथिगण पहुँचने लगे हैं।

बज्रपुरी के राजा विक्रमसिंह पहले आनेवाले अतिथियों में से एक हैं। उन्हें राजा महेन्द्रदेव के पास ले जाया जाता है।

स्वागत विक्रमसिंह ! हम बहुत दिनों के बाद मिल रहे हैं।
किन्तु, मेरे मित्र, आप राजधानी से बाहर चले गये थे। मैंने सुना कि आप की हत्या का प्रयास किया गया था।

कोई मेरा राजसिंहासन हड़पना चाहता था, किन्तु समय पर षड्यन्त्र विफल कर दिया गया।
यह सब मुझे नहीं मालूम था। मुझे प्रसन्नता है आप सही सलामत हैं।

कुछ परिचित चेहरे दिखाई नहीं पड़ रहे हैं? नरेन्द्रदेव और उसका बेटा कहाँ हैं?
मुझे हटाने के षड्यन्त्र के पीछे ये लोग थे। मुझे सन्देह है कि मेरे प्रधान मंत्री की हत्या में नरेन्द्रदेव का हाथ था।
पर वह तो आप का साला था; उसे ऐसा करना...
वास्तव में, मुझे आशा थी कि रवीन्द्रदेव मेरा उत्तराधिकारी होगा। किन्तु पिता-पुत्र दोनों अत्यधिक महत्त्वाकांक्षी हो गये। पिता जादू-टोना का भी प्रयोग करने लगा।
और फिर क्या हुआ?
मेरे प्रधान मंत्री का बेटा आदित्य ने मेरी मदद की। वह मुझे राजधानी से बाहर ले गया। नरेन्द्रदेव मगरमच्छ की पकड़ में आने से अपनी टांगें खो बैठा।
मगरमच्छ?
महेन्द्रदेव के हित में विक्रमसिंह एक मगरमच्छ के साथ अपने साहसिक संघर्ष को याद करता है।
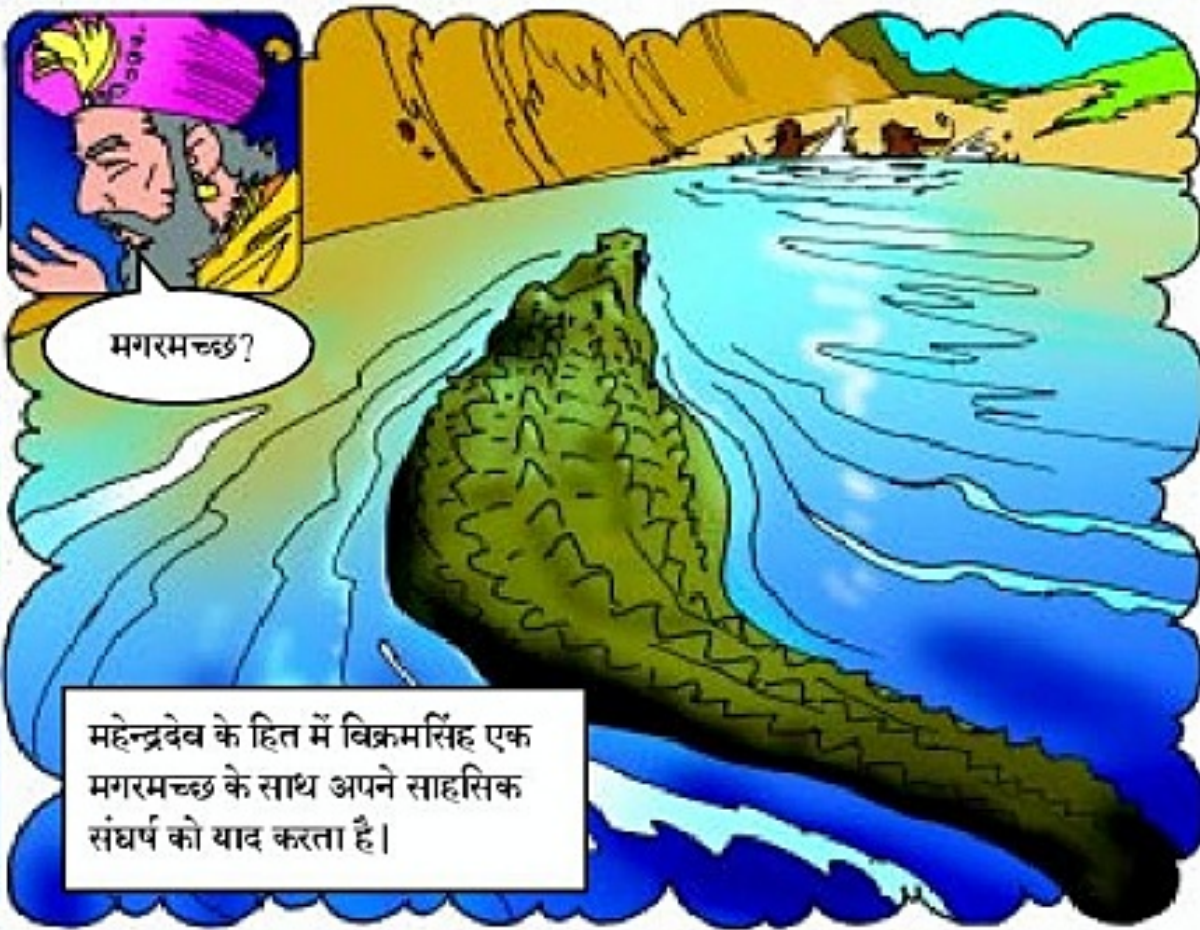
मुझे याद है, हम दोनों एक बार अपने गुरुकुल के निकट नदी में तैर रहे थे; तभी एक मगरमच्छ ने हम दोनों पर आक्रमण किया।
वह जानता था कि यदि वह मगरमच्छ से भिड़ गया तो उसमें बहुत बड़ा खतरा है।
इसलिए, उसने मगरमच्छ को पानी के अन्दर ले जाने का निश्चय किया।
उसने नदी के अन्दर छलांग लगाई और किसी तरह मगरमच्छ को चित कर दिया।
तब उसने एक छूरा निकाला और उसके पेट में घुसेड़ दिया।
उसने मुझे चिल्लाकर किनारे पर जाने के लिए कहा, क्योंकि नदी का पानी लाल हो गया था। मैं उसके इस साहस को कभी भूल नहीं पाऊँगा।
क्रमशः

रक्षा बन्धन

सहोदर भाई-बहन के प्यार के प्रतीक रक्षा बन्धन को आम तौर पर 'राखी' कहते हैं जो वास्तव में एक धागा होता है जिसे बहनें अपने भाइयों की कलाई पर बाँधती हैं। यह सामान्य अर्थ में त्योहार नहीं है; आनन्दोत्सव प्रायः परिवार तक ही सीमित रहता है, जब बहन अपने भाई के घर आती है और औपचारिक रूप से उसकी कलाई पर राखी बाँधती है, उसके ललाट पर तिलक लगाती है और उसकी लम्बी आयु की कामना करती हुई उसके सिर पर चावल छिड़कती है। भाई उसके प्यार को स्वीकार करता है और हमेशा हर हालत में उसकी रक्षा करने का वचन देता है। राखी को बाँधने से पूर्व पूजा करके उसे शुद्ध कर लिया जाता है। यद्यपि इस आनन्दोत्सव में केवल भाई और बहन की ही भूमिका होती है, फिर भी परिवार में मौजूद सभी सदस्य इसमें सम्मिलित होते हैं और सब मिलकर विशेष पकवान और भोजन खाते हैं।

रक्षा बन्धन उत्तर भारत में बहुत लोकप्रिय है लेकिन यह भावना अन्य स्थानों के लोगों में भी फैल रही है और प्रायः देखा जाता है कि बहनें इस अवसर पर राखी के साथ भाइयों से मिलने जाती हैं और भाई उन्हें रक्षा का वचन देते हैं। व्यावहारिक रूप से इस पर्व का धार्मिक महत्व नहीं है, फिर भी यह एक प्राचीन परम्परा के रूप में प्रचलित हो गया है।

महाभारत में, द्रौपदी कृष्ण भगवान को राखी बाँधती है, ताके वे इसकी रक्षा कर सकें और वह विधवा न हो जाये। भारतीय इतिहास में एक प्राचीन प्रसंग के अनुसार सिकन्दर की पत्नीने पोरस को राखी बाँधी थी और अपने पति के प्राणदान का वचन माँगा था।

राखी बाँधते समय बहन यह प्रार्थना करती है: "हे राखी, मैं प्रार्थना करती हूँ कि तुम अपने भक्तों की रक्षा सदा करती रहो।" भारत का यह अनोखा उत्सव भाई-बहन के बन्धन को निरन्तर मजबूत बनाता रहता है। इस वर्ष रक्षा बन्धन ९ अगस्त को है।

आप के पन्ने आप के पन्ने

तुम्हारे लिए विज्ञान

काँव-काँव की कथा

कौवा पक्षी से कौन परिचित नहीं है? यद्यपि मनुष्यों के साथ यह हजारों वर्षों से रह रहा है, यह हमारी जिज्ञासा को बढ़ा नहीं पाया। फिर भी, हाल की खोजों से पता चला है कि कौवों में औसत से अधिक बुद्धि है।

वैज्ञानिकों ने एक कौवे की कहानी की रिपोर्ट में बताया है कि वह नैफ्थेलिन गोलियों पर नाचना पसन्द करता है। शोध कर्ताओं को पता चला है कि कौवा यह विचित्र नृत्य इसलिए करता है कि नैफ्थेलिन का रसायन इसके पैरों के परजीवियों से मुक्त होने में उसकी सहायता करता है। एक विख्यात प्राणि- वैज्ञानिक बर्नाड ग्रीमेक की रिपोर्ट के अनुसार एक घटना में कौवों ने माचिस की तिल्लियाँ जला कर उन्हें अपने पंखों के नीचे पकड़ कर रखा। जो भी हो, ग्रीमेक को इस विचित्र व्यवहार के कारण का पता नहीं चल सका। कौवे गुरुत्वाकर्षण की शक्ति का बहुत अच्छा उपयोग करते हैं। जब ये अपनी चोंच से किसी खोल को तोड़ नहीं सकते तब ये ऊँचाई पर जाकर इसे नीचे गिरा देते हैं। कैसा लगा तुम्हें?

तुम्हारा प्रतिवेश

हिमानी आश्चर्य

हम सब सूर्य की अपरिमित शक्ति से परिचित हैं। इसलिए यदि कोई कहे कि यह बर्फ को पिघला नहीं सकता तो हमें विश्वास नहीं होगा। जो भी हो, जैसा कि कहा जाता है, कभी-कभी सत्य कल्पना से भी अधिक विचित्र होता है।

नवनिर्मित हिम पर पड़नेवाली धूप का ९० प्रतिशत परावर्तित हो जाता है। इसलिए गर्मी बर्फ के अन्दर अवशोषित नहीं होती और ताप गलनांक तक नहीं बढ़ पाता। अब तुम कह सकते हो कि आखिर बर्फ तो पिघलती है। तब वह क्या चीज है जिससे बर्फ पिघलती है? वास्तव में समुद्र की गर्म हवा से ऐसा होता है। जब स्नो सख्त होकर आइस बन जाता है तब सूर्य को इसे पिघलाने में और भी कठिनाई होती है, हालांकि आइस अपने ऊपर पड़नेवाली धूपका दो-तिहाई हिस्सा सोख लेता है। ऐसा इसलिए होता है कि धूप को अनेक परतों को काट कर अन्दर जाने के बाद ही आइस इसे सोखता है। इसलिए अन्त में सोखे गये ताप में इतनी प्रगाढ़ता नहीं होती कि वह गलनांक तक बढ़ जाये।

आप के पन्ने आप के पन्ने

क्या तुम जानते थे?

मोमबत्तियों का रहस्य

मोमबत्तियाँ नाना रूप और आकार में आती हैं। आजकल तो रंगीन भी आती हैं। ये वातावरण को रहस्यात्मक और जादुई बना देती हैं। अनेक आनन्दोत्सवों और मांगलिक अवसरों पर हमलोगों ने मोमबत्तियाँ प्रज्वलित की हैं। तुम्हें आश्चर्य हुआ होगा कि आखिर मोमबत्ती के जल जाने के बाद मोम का क्या होता है? वह कहाँ गायब हो जाता है? यहाँ हमें यह समझने की जरूरत है कि मोम किस चीज से बनता है। मोम कारबन और हाइड्रोजन का मिश्रण है। प्रज्वलन की प्रक्रिया में कारबन हवा में आक्सिजन से मिलकर कारबन डायोक्साइड बनाता है। हाइड्रोजन आक्सिजन से मिलकर जल बाष्प बनाता है। इन दोनों रासायनिक प्रतिक्रियाओं के दौरान मोम नष्ट होता जाता है और मोमबत्ती की लम्बाई छोटी होती चली जाती है।

अपने भारत को जानो

एक और स्वाधीनता दिवस १५ अगस्त को है। इसलिए अगस्त महीना अपने स्वाधीनता आन्दोलन की स्मृति का समुचित समय है। निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर देने का प्रयास करो:

१. कॉंग्रेस का प्रथम अधिवेशन एक शहर में आयोजित होनेवाला था, किन्तु दूसरे शहर में इसे आयोजित किया गया। किस शहर में और क्यों?

२. डॉ.एनी बेसेण्ट, सरोजिनी नायडू और नेल्ली सेनगुप्ता स्वाधीनता से पहले एक महत्वपूर्ण पद पर थे। वह पद क्या था?

३. कब तिरंगे झण्डे को भारत का राष्ट्रीय झण्डा स्वीकार किया गया?

४. कब और कहाँ जन-गण-मन पहले पहल गाया गया?

५. सन् १९२९ में १४ जून को लाहौर सेन्ट्रल जेल में बन्दी एक बहुत बड़े क्रान्तिकारी ने भूख हड़ताल की। वह क्रान्तिकारी कौन था? भूख-हड़ताल कितने दिनों तक चली?

(उत्तर ६६ पृष्ठ पर)

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो,
जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?

MACHIRAJU KAMESWARA RAO

N. SUKUMAR

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,

प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई - ६०० ०९७.
जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए। सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर
१००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा।

बधाइयाँ

शिखा जैन
१९, अबुल फजल रोड
बंगाली मार्केट
नई दिल्ली-११० ००१.

विजयी प्रविष्टि

मुझको मेरा देश बुलाए।
देखूँ, कोई अतिथि आए॥

अपने भारत को जानो प्रश्नोत्तरी के उत्तर:

१. सन् १८८५ में, हैजा फैलने के कारण पूना से बदलकर बम्बई में आयोजित किया गया।
२. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष का पद।
३. सन् १९४७ में २२ जुलाई को संविधान सभा द्वारा।
४. सन् १९११ के दिसम्बर महीने में, कलकत्ता के कांग्रेस अधिवेशन में।
५. जतीन्द्र नाथ दास - ६३ दिनों तक, जिसके अन्त में जेल में उनकी मृत्यु हो गई।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 26 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor: B. Viswanatha Reddi (Viswam)

TEST YOUR IQ
Where is the sun being photographed every day?
Crocodiles are closely related to birds than reptiles! If so, what is their relationship with dinosaurs?
Why is the neck of the camel crooked?
Which is the Cherry Capital of the world?
What is India's national game? Kabaddi? Chadu-gudu? Check out, you'll be surprised.
Who is considered the 'first warrior' in India's freedom struggle?
How many varieties of orchid can you trace in Manipur?
The crocodile forgets all about his friendship with the monkey, so that he can satisfy his wife. When the monkey knows the truth, he manages to escape. How?
If you feel you are stumped, don't worry, you'll get all the answers in Junior Chandamama August 2006 issue. Go, grab a copy!
Junior
CHANDAMAMA
THE ONE-STOP COMPLETE FUN AND ACTIVITY MAGAZINE
NOW AVAILABLE AT YOUR NEAREST NEWS STAND FOR
RS.15 PER COPY
PAY ONLY RS.150 FOR ANNUAL SUBSCRIPTION AND SAVE RS.30
For Further Details write to :
CHANDAMAMA INDIA LTD.,
82, Defence Officer's Colony,
Ekkatuthangal, Chennai - 600 097.
TREASURE-TROVE FOR TALENTED TOTS
Junior
CHANDAMAMA
OUR NATIONAL FLAG

CHANDAMAMA (Hindi) AUGUST 2006
Regd. with Registrar of Newspaper for India No. 1087/57. Regd No. TN/CC(S)Dn/163/06-08
Licensed to post WPP - Inland No.TN/CC(S)Dn/92/06-08, Foreign No. 93/06-08